ಕರ್ನಾಟಕ ರಾಜ್ಯ ಮುಕ್ತ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾನಿಲಯ
ಮಾನಸಗಂಗೋತ್ರಿ, ಮೈಸೂರು – 570 006.

Karnataka State Open University
Manasagangothri, Mysore - 570 006.

## M. A. Previous HINDI
## Course / Paper - II

# आधुनिक हिन्दी काव्य

## निराला और उनका

## ' तुलसीदास '

**Block - 7**

ಉನ್ನತ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕಾಗಿ ಇರುವ ಅವಕಾಶಗಳನ್ನು ಹೆಚ್ಚಿಸುವುದಕ್ಕೆ ಮತ್ತು ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಪ್ರಜಾತಂತ್ರೀಕರಿಸುವುದಕ್ಕೆ ಮುಕ್ತ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾನಿಲಯ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯನ್ನು ಆರಂಭಿಸಲಾಗಿದೆ.

*ರಾಷ್ಟ್ರೀಯ ಶಿಕ್ಷಣ ನೀತಿ 1986*

The Open University system has been initiated in order to augment opportunities for higher education and as an instrument of democratising education.

*National Education Policy 1986*

प्रथम एम.ए. - कोर्स दो

Course - II, Paper - II

7

# " तुलसीदास "

| Unit No. 23 to 28 | Page No. |
|---|---|
| अनुक्रमणिका | |


| | | | |
|---|---|---|---|
| इकाई | 23 | तुलसीदास की जीवनी, व्यक्तित्व और कृतित्व | 1 - 26 |
| इकाई | 24 | निराला के काव्य की प्रवृत्तियाँ | 27 - 44 |
| इकाई | 25 | निराला - तुलसीदास | 45 - 62 |
| इकाई | 26 | तुलसीदास : एक विवेचन | 63 - 78 |
| इकाई | 27 | तुलसीदास : एक सर्वेक्षण | 79 - 98 |
| इकाई | 28 | तुलसीदास : छायावादी परिप्रेक्ष्य एवं युग चेतना | 99 - 118 |

## पाठ्यक्रम अभिकल्प तथा संपादकीय समिति


प्रो.एम.जी.कृष्णन
उप कुलपति महोदय तथा
संपादकीय समिति के अध्यक्ष
क.रा.मु.वि.विद्यालय,
मैसूर - 6

प्रो.एस.एन.विक्रमराज अरस
निदेशक (शैक्षणिक) - संयोजक
क.रा.मु.वि. विद्यालय
मैसूर - 6

संयोजक
डॉ.कांबले अशोक
अध्यक्ष., हिन्दी विभाग
क.रा.मु.वि.विद्यालय, मानस गंगोत्री
मैसूर - 6

संपादक
**डॉ.शशिधर एल.जी**
रीडर, हिन्दी विभाग
मैसूर विश्वविद्यालय, मानस गंगोत्री
मैसूर - 6.

**पाठ्यक्रम की लेखिका**

**डॉ.एम.विमला**
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
ज्ञानभारती, बेंगलूर विश्वविद्यालय
बेंगलूर - 56.



**कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, मैसूर, शैक्षणिक अनुभाग द्वारा निर्मित ।** सभी अधिकार सुरक्षित । कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय से लिखित अनुमति प्राप्त किए बिना, इस कार्य के किसी भी अंश को किसी भी रूप में अनुलिपित या किसी अन्य माध्यम द्वारा प्रतिकृति नहीं किया जाएगा ।


कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम पर अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मानस गंगोत्री, मैसूर - 6 से प्राप्त की जा सकती है ।


कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से **रजिस्ट्रार (प्रशासन)** द्वारा मुद्रित व प्रकाशित ।

# ब्लाक परिचय

प्रिय विद्यार्थी,

**कोर्स - एक** में आपने **'कर्नाटक संस्कृति एवं कन्नड़ साहित्य'** का अध्ययन किया । इससे कन्नड़ भाषा, लिपि, कर्नाटक की धार्मिक परंपरा और कर्नाटक के मंदिर, कर्नाटक के पर्व और त्योहार, लोक कलाएँ तथा कर्नाटक के प्रमुख राजाओं तथा शासकों का परिचय कन्नड़ साहित्य का काल-विभाजन, 'कविराज-मार्ग' वड्डराधने का ज्ञान भी प्राप्त कर लिया ।

इसके साथ-साथ आपने कर्नाटक संगीत, कन्नड़ साहित्य के पंपयुग, बसवयुग, वचन-साहित्य, और बसवण्णा, कुमारव्यास युग, दास साहित्य का भी परिचय और ज्ञान प्राप्त कर लिया । कर्नाटक के राष्ट्रकवि कुवेंपु, बेन्द्रे, मास्ति वेंकटेश अय्यंगार आदि प्रमुख साहित्यकारों के बारे में जानकारी प्राप्त कर लीं ।

**कोर्स - दो** के **ब्लाक एक** में आपने **'आधुनिक हिन्दी काव्य - साकेत'** के बारे में और **ब्लाक दो** में **'कुरुक्षेत्र'** के बारे में तथा **ब्लाक तीन** में आपने **'कामायनी'** के बारे में जानकारी प्राप्त कर लीं ।



M.A HINDI COUR -2 BLOCK-7 FNO.-1 BACK

:: 2 ::

अब आप **ब्लाक - चार** में **सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'** विरचित **'तुलसीदास'** में तुलसीदास की जीवनी, व्यक्तित्व और कृतित्व, निराला के काव्य की प्रवृत्तियाँ, निराला-तुलसीदास, तुलसीदास : एक विवेचन, तुलसीदास - एक सर्वेक्षण और तुलसीदास : छायावादी परिप्रेक्षय एवं युग चेतना के बारे में अध्ययन करने जा रहे हैं । इस अध्ययन के बाद क्रांतिकारी सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के समग्र चित्रण और खंडकाव्य तुलसीदास के बारे में भी ज्ञान प्राप्त करेंगे ।

शुभकामनाओं के साथ,

डॉ.कांबले अशोक
अध्यक्ष , हिन्दी विभाग
क.रा.मु.वि. विद्यालय
मैसूर - 6.

# इकाई तेईस : तुलसीदास की जीवनी, व्यक्तित्व और कृतित्व

## इकाई की रूपरेखा


23.0. उद्देश्य

23.1. प्रस्तावना

23.2. निराला का व्यक्तित्व

23.3. निराला की जीवनी

23.4. निराला के काव्य कृतियाँ

23.5. निराला की काव्य कृतियों का एक सर्वेक्षण

23.6. अनामिका - निराला का प्रथम काव्य संग्रह

23.7. परिमल - निराला का दूसरा काव्य कृति

23.8. गीतिका - निराला का तीसरा काव्य संकलन

23.9. अनामिका - निराला का चौथा काव्य संकलन

23.10. कुकुरमत्ता - निराला का पाँचवाँ काव्य संकलन

23.11. अणिमा - निराला का छटे काव्य संकलन

23.12. बेला - निराला का सातवाँ काव्य संकलन

23.13. नए पत्ते - निराला का आठवाँ काव्य संकलन

23.14. निराला की अन्य काव्य कृतियाँ

23.15. सांध्य काकली काव्य कृति : एक विश्लेषण

23.16. बोध प्रश्न

## 23.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने 'साकेत', 'कुरुक्षेत्र' के बारे में अध्ययन किया और राष्ट्रकवि गुप्तजी से कृत 'साकेत' की विशेषता तथा उर्मिला का चरित्र-चित्रण आदि के बारे में जानकारी प्राप्त कर लिया । रामधारीसिंह दिनकर कृत 'कुरुक्षेत्र' तथा आधुनिक समस्याएँ, युद्ध की अनिवार्यता आदि के बारे में भी अध्ययन किया और जानकारी भी प्राप्त कर लिया । जयशंकर प्रसाद के मेस्कृति विश्वविख्यात 'कामायनी' के बारे में अध्ययन किया ।

## 23.1. प्रस्तावना

इस इकाई में आपने सूयाकांत त्रिपाठी निराला की जीवनी, व्यक्तित्व और उनकी काव्य कृतित्व के बारे में अध्ययन करने जा रहे है ।

## 23.2. निराला का व्यक्तित्व

आधुनिक हिन्दी साहित्य में सूर्यकांत त्रिपाठी निराला एक विशिष्ट एवं मूर्धन्य हस्ताक्षर हैं जिनकी सजनात्मक प्रतिभा ने इसी शती के हिन्दी साहित्य को न केवल समृद्ध बताया है, अपितु सर्वथा नई चेतना एवं प्रेरणा प्रदान की है । आधुनिक हिन्दी साहित्य में अपने उदात्त, रोचक, अजनबी और विक्षिप्त व्यक्तित्व के कारण निराला जितने चर्चित हैं उतना शायद ही कोई दूसरा कवि चर्चित न हुआ हो । नाना प्रकार की किंवदंतियों से अपने जीवित काल में ही निराला दंतकथा बन गए थे । उनकी संघर्षमय जीवन यात्रा ऐसी रही कि वे बिना थके और झुके आजीवन उनसे लड़ते रहे, फलतः इनकी रचनाओं में जीवन की यथार्थताओं के दर्शन होते हैं । अपने जीवन में अभावों, असहनीय यातनाओं और यंत्रणाओं को सहने के बावजूद भी निराला ने कभी पलायन का गीत नहीं गाया, नियति को उत्तरदायित्व नहीं ठहराया, अपितु जीवन को जीने की अदम्य आकांक्षा को निरंतर बनाए रखा ।

निराला ने समाज के दलित, शोषित एवं अभिशप्त जीवियों की वेदना को अपने काव्य में अत्यंत मानवीय अनुकंपा और अतःकरण से स्वर दिया है । मानवीय संबंधों में तनाव लानेवाले तमाम मूल्यों के कटघरे से मानव को मुक्त करके उसे उदात्त मानवतावादी मूल्यों से दीक्षित करने का श्रेय निराला के अपरोजेय व्यक्तित्व को है ।

छायावादी काव्य के परिवेश में निराला के साहित्यिक व्यक्तित्व का श्री गणेश हुआ । उस काव्य धारा को उन्होंने प्राणदान दिया, उस काव्यधारा को मात्र प्रकृति एवं कल्पना का काव्य रहने न देकर उसे राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा के रूप में विकसित करने का महत्वपूर्ण श्रेय निराला के कृतित्व को है । छायावादी काव्यधारा की समस्त प्रवृत्तियों का निराला प्रतिनिधित्व करते तो हैं, किंतु केवल वहीं तक अपने को सीमित न रखकर युग की संवेदनाओं के प्रति निरंतर जुड़े रहकर पिछली शती के उत्तरार्द्ध के सभी सामाजिक एवं साहित्यिक आंदोलनों से प्रेरणा और प्रभाव ग्रहण करके निराला ने हिन्दी को सर्वथा नया चिंतन एवं नया मोड दिया है । इस दृष्टि से 'निराला निश्चय ही आधुनिक हिन्दी काव्य में वसंत के अग्रदूत हैं । उनका काव्य स्वच्छंदतावाद को अर्थ दीप्ति देता है, उसके नए आयाम विकसित करता है और वैयक्तिक प्रतिक्रियाओं से लेकर प्रगति, प्रयोग तक जाता है । निराला का स्वाभिमान उन्हें असमझौतावादी बनाता है, इसलिए राजकीय स्तर पर वे अनपुजे रह गए यद्यपि हिन्दी जनता का जितना आदर सम्मान उन्हें मिला, दूसरों को प्रायः मयस्सर नहीं होता'

## 23.3. निराला का जीवनी

निराला के पूर्वज उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के गढ़कोला गाँव के निवासी थे जो साधारण किसान थे । इसी गाँव में निराला का जन्म सन् 1896 में हुआ । इनके पिता थे पं.रामसहाय त्रिपाठी जो महिषादल में सिपाही की नौकरी करते थे । वे अपनी इस नौकरी में तरक्की पाते हुए राज्य कोष के संरक्षक पद तक पदोन्नति कर गए । यह महिषादल बंगाल का एक राज्य था जहाँ

निराला की आरंभिक शिक्षा-दीक्षा हुई । निराला के भावकोष को अत्यंत चेतोहारिणी बनाने में इस महिषादल की प्राकृतिक संपदा का अपना विशिष्ट योगदान है, वैसे निराला के काव्य में प्राकृतिक सौंदर्य के जो अनुपम स्थल हैं वे महिषादल की प्रकृति के जीवंतचित्र हैं । एक ओर प्रकृति ने बालक निराला के व्यक्तित्व को प्रभावित किया है तो दूसरी ओर वहाँ के राजा साहब की विशेष कृपा से प्राप्त परिसर से जो संस्कार हासिल हुए, उनका अमिट प्रभाव इनके काव्य में देखा जा सकता है । निराला ने वहाँ के राजपुत्रों के साथ शास्त्रीय संगीत की शिक्षा प्राप्त की फलतः निराला राग रागिनियों के अच्छे निष्णात हुए । निराला के काव्य में उपलब्ध होनेवाला नाद सौंदर्य, राग-ताल-गति की जो अद्‌भुत छटा है वह उस संगीत संस्कार का फल है । उनके मुक्त छांदों में भी जो गति और माधुर्य है वह भी उनके संगीतज्ञान का ही परिणाम है ।

यद्यपि महिषादल के राजासाहब ने निराला की बुद्धिमता से प्रभावित होकर शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था कर दी थी, पर निराला ने स्कूली शिक्षा से कम किंतु स्कूल के बाहर की अन्य विधाएँ सीखने में अधिक दिलचस्पी दिखाई । अपनी 8-10 वर्ष की उम्र में ही वे बंगला मे कविता करने लगे थे, घुड दौड, कुस्ती में इनका मन था । हाईस्कूल की नौंवीं कक्षा में जब निराला पढ रहे थे, तभी इनका विवाह मनोहरा देवी के साथ (1911 सन्) संपन्न हुआ । परिणामतः निराला हाईस्कूल की शिक्षा भी पूरी कर नहीं पाए ।

जब निराला तेईस वर्ष के थे, यानी सन् 1919 में देश में महामारी आई तो निराला के पिता सहित पत्नी, चाचा, भाई भतीजों और अन्य अनेक परिजनों की मृत्यु हो गई तो बचे हुए बाल-बच्चों का पालन पोषण करने का उत्तरदायित्व निराला पर ही पड़ा तो वे इन बच्चों में से अपने पुत्र एवं पुत्री को नाना-नानी के घर छोड़कर बाकी चार भतीजों को लेकर बंगाल चले आए । यहाँ आकर संघर्ष के दिन शुरु किए जो संघर्ष उनके अंतिम दिनों तक रहा । अपने

इस संघर्ष के बारे में निराला का कहना है -'सोलह-सत्रह साल की उम्र में भाग्य में जो विपर्यय शुरु हुआ वह आज तक रहा । लेकिन मुझे इतना ही हर्ष है कि जीवन के उसी समय में मैं ज़ीवन के पीछे दौड़ा, जीव के पीछे नहीं । जीव के पीछे पड़नेवाला बड़े-बड़े मकान, राष्ट्र, चमत्कार और जादू से प्रभावित होकर जीवन से हाथ धोता है जीवन के पीछे चलनेवाला जीवन के रहस्य से अनभिज्ञ नहीं होता ।' इस प्रकार हम देखते हैं कि निराला जीवन के अर्थों के अन्वेषण में सदा संघर्ष करते रहे । व्यक्ति की यातना को जीवन की यातना में तिरोहित करते हुए आदि से अंत तक निराला ने बहुत कुछ भोगा है और यह सारा उनके काव्य में अभिव्यक्त भी हुआ है ।

निराला बंगभूमि के मानसपुत्र हैं जिसने इनमें काव्यचेतना, वैचारिक चेतना और आध्यत्मिक चेतना को जागृत होने का भरसक मौका दिया है । रामरतन भटनाकर के शब्दों में 'निराला हिन्दी को बंगला के रेनासाँ की देन हैं ।' बंगाल के उत्कृष्ट साहित्य का परिचय निराला को इसी बंगभूमि में हुआ । रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद के व्यक्तित्व और दर्शन से ये इतना प्रभावित हुए कि रामकृष्ण के महान चिंतन का संग्रह 'रामकृष्ण वचनामृत' का अनुवाद हिन्दी में तीन भागों में प्रस्तुत किया है । रवीन्द्रनाथ के साहित्य से प्रभावित होकर 'रवीन्द्र कविता-कानन' शीर्षक से रवीन्द्र काव्य का अनुवाद अपनी लंबी भूमिका के साथ प्रकाशित किया है । इसी शृंखला में निराला 'दुर्गेश नंदिनी, आनंदमठ, कपालकुण्डला और अन्यान्य कृतियों का अनुवाद हिन्दी में प्रस्तुत करके हिन्दी को बंगला के उत्कृष्ट साहित्य का परिचय कराया है ।

बंगाल में निराला ने जीवन की नाना अनुभूतियाँ प्राप्त की । वहाँ वे एकदम द्वीप की भाँति न रहे । जिस प्रकार उन्होंने वहाँ की समृद्ध साहित्यिक परंपरा का स्वाद देखा उसी प्रकार वहाँ की जीवनधारा का अभिन्न अंग बनी हुई सामंत वादी पूँजीवादी संस्कृति

से भी परिचय प्राप्त किया । शोषण, दमन के शिकार बनी हुई शापित लोगों की व्यथा को पहचाना । रूढ़िबद्ध एवं अर्थहीन मूल्यों की लीक पर चल रही जनता को देखकर निराला का मन अत्यंत खिन्न हो उठा । इन सब के प्रति लड़ने विद्रोह करने की उनकी मनोवांछा को बंगाल के सर्वश्रेष्ठ चिंतक राजाराम मोहन राय, माइकेल मधु सूदन दत्त, बंकिमचंद्र, विवेकानंद, रवीन्द्र आदि की प्रखर चिंतनधारा ने बल दिया । फलतः निराला के व्यक्तित्व में उदांत्त मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता स्थिर हुई ।

निराला की स्कूली शिक्षा बहुत जल्दी ही समाप्त हुई मगर जीवन के प्रांगण में वे हर पल संघर्ष करते और उस संघर्ष से बड़ी घी शक्ति पाते गए । महिषादल में जब तक रहे, उन्होंने वहाँ के अभिजात वर्ग के साथ भी अपना संबंध रखा, और वैसे ही वहाँ की आम जनता के साथ भी वे जुड़े रहे । रामविलास शर्मा के शब्दों में **'निराला महिषादल के गाँवों में जाते, मित्रों के साथ वहाँ के किसानों, कोरियों जुलाहों आदि का संगठन करते, उन्हें स्वदेशी का महत्व समझाते ।'** सामंतवादी शक्तियों से समझौता करने की प्रवृत्ति निराला की नहीं थी इसलिए ही वे महिषादल में अधिक दिन नहीं रह पाए । 1921 में महिषादल छोड़कर वे अपने गाँव गढ़ा कोला चले गए, फिर वहाँ से 1922 में कलकत्ता चले आए । यहाँ रामकृष्ण आश्रम से संबद्ध होकर 'समन्वय' और बाद में 'मतवाला' का संपादन किया । यहाँ पर भी वे ज्यादा दिन टिक नहीं पाए । रामकृष्ण आश्रम के संपर्क से निराला के व्यक्तित्व पर आध्यात्म का विशेष प्रभाव पड़ा । रामकृष्ण और विवेकानंद के सामाजिक, वैचारिक एवं दार्शनिक चिंतन से तीव्र रूप से प्रभावित निराला के काव्य की दार्शनिक पृष्ठभूमि में इन महान साधक दार्शनिक का विशिष्ट प्रभाव है ।

सामाजिक असमानता, अन्याय शोषण, अंधविश्वास और सांप्रदायिक विचारधारा के खिलाफ निराला शुरु से ही संघर्ष करते ही आ रहे हैं । इसलिए ही वे अनिकेतनवासी हैं । कहीं एक स्थान

पर उनका स्थिर रहना संभव नहीं हो पाया है । वे बराबर कलकत्ता, गढ़ाकोला, कानपुर, लखनऊ, उन्नाव, काशी, प्रयाग आदि स्थानों का चक्कर काटते रहे । अपने गाँव के किसान जमीनदारों को जो संघर्ष 1928-29 में हुआ, उसमें निराला ने सक्रिया भाग लिया था । इस ओर इशारा करते हुए नंद दुलारे वाजपेयी ने लिखा है - **'सन् 1928 में निरालाजी कलकत्ता से अपने गाँव गढ़ाकोला आए । यहाँ उनका संघर्ष स्थानीय जमीन्दारों से हुआ । स्वयं निरालाजी का बगीचा और जमीन बेदखल कर ली गयी थी और गाँववालों पर अत्याचार किया जा रहा था । निराला ने किसानों का संगठन किया और काफ़ी समय तक जमीन्दारों से लोहा लेते रहे ।'** सामाजिक जीवन के प्रति निराला की इस प्रतिबद्धता को इनकी अनेक रचनाओं में देख सकते हैं । 'अप्सरा' उपन्यास का नायक चंदन किसानों का संगठन करता है । 'अलका' में किसान और जमीन्दारों का संघर्ष उभर आया है । 'कुल्लीभाट' में सामाजिक विषमताओं को उभारकर प्रस्तुत किया गया है । उनकी पद्यात्मक रचनाओं में तो हमारे सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं स्थापित किंतु अर्थहीन मूल्यों के प्रति तीव्र विरोध प्रकट किया गया है ।

निराला का व्यक्तिगत जीवन काँटों का सेज रहा है । व्यक्तिगत जीवन में कई संघर्ष इन्हें करने पड़े, अपनी छोटी उम्र में बन्धु बांधवों को खोकर बचे हुए लोगों की रक्षा का भार वहन करने का दायित्व इन्हीं पर पड़ा जिसे निभाने में निराला को कष्ट नहीं लगा किंतु पत्नी और पुत्री के असामयिक निधन से निराला को ऐसा आघात लगा कि उसे से उनका हृदय चूर-चूर हो गया, अपने इन प्रियजनों के बिछुडने से निराला ने जो पीड़ा सही, उसका वर्णन **'सरोज-स्मृति'** कविता में है जो किहिन्दी का महत्वपूर्ण शोकगीत है । यह कविता मात्र शोकगीत नहीं है । जिसमें कवि अपना शोक प्रकट करता हो, अपितु यह कविता हमारी सामाजिक व्यवस्था पर कठोर प्रहार करती है । **'सरोजस्मृति'** कविता को मात्र शोक गीत कह देना उसके विराटता को कम करना है । यहाँ

निराला अपनी बेटी के कारुणिक निधन के माध्यम से विषमता से भरे समाज पर आक्रामक मुद्रा में प्रहार करते हैं, जिसे हिन्दी स्वच्छंदतावादी काव्य का एक नयी यथार्थभूमि में पदार्पण कहना अधिक उचित होगा ।

निराला का काव्य उनकी पत्नी मनोहरादेवी के प्रति बड़ा ऋणी है जिनकी प्रेरणा के फलस्वरूप निराला ने साहित्य सृजन में अपने को समर्पित किया । मनोहरादेवी विदूषी थी, हिन्दी के प्रति बड़ा अभिमान रखती थी और अपने पति को हिन्दी की ओर खींचने का भरसक प्रयत्न करती थी । हिन्दी के बारे में इन दोनों के बीच का यह वार्तालाप बड़ा मार्मिक है - **'एक दिन झल्लाकर निरालाजी ने पूछा - 'तुम हिन्दी-हिन्दी करती हो, हिन्दी में क्या है ? ' जवाब मिला - 'तुम्हें आती ही नहीं, तब कुछ नहीं ।' निराला जी ने कहा 'हिन्दी हमें नहीं आती ? ' मनोहरादेवी ने कहा 'यह तो तुम्हारी जबान' बतलाती है ।** बेसवाडी बोल लेते हो, तुलसीदास कृत 'रामायण' पढ़ी है, बस तुम खड़ीबोली को क्या जानते हो ? ' और फिर उन्होंने एक के बाद एक हिन्दी के धुरंधर पंडितोंके नाम दोहरा दिए । निरालाजी भौचक्के से देखते ही रहे । बात उनके मन पर गहरी चोट कर गयी । उन्होंने हिन्दी सीखने की ठानी और बिना किसी व्यक्ति की सहायता के रात-रात भर जागकर 'सरस्वती' और 'मर्यादा' पत्रिकाओं के आधार से हिन्दी सीखी । और सीखी तो ऐसी सीखी कि हजारों को हिन्दी लेखन का एक आदर्श दिया ।' मनोहरा देवी जो निराला के जीवन की निरंतर प्रेरणा दायिनी थी, जब उसका निधन हुआ तो निराला का संवेदनशील हृदय उस असामयिक अंलगाव को सहते सहते सह गया । वे मात्र चार-पाँच साल की लौकिक हमसफर रहीं । मगर निराला ने अपनी सृजन यात्रा की अभिन्न संगिनी के रूप में मनोहरादेवी को स्वीकार किया हे, यानी वह निराला के काव्य में चिरंतन प्रिया के रूप में विद्यमान हैं जिनसे अलग निराला की कल्पना करना असंभव है । अपनी संगिनी को निराला ने अपना कविता संग्रह 'गीतिका' का सादर समर्पण करते हुए लिखा है -

**'जिसकी हिन्दी के प्रकाश से प्रथम परिचय के समय, मैं आँखें नहीं मिला सका लजकर हिन्दी की शिक्षा के संकल्प से कुछ साल बाद देश से विदेश पिता के पास चला गया था और उस हिन्दी-हीन प्रांत में, बिना शिक्षक के, 'सरस्वती' की प्रतियाँ लेकर पद साधना की और हिन्दी सीखी थी ; जिसका स्वर गृहजन, परिजन और पुरजनों की सम्मति में मेरे (संगीत) स्वर को परास्त करता था, जिसकी मैत्री की दृष्टि क्षण मात्र में मेरी रुक्षता को देखकर मुस्कुरा देती थी ; जिसने अंत में अदृश्य होकर मुझ से मेरी पूर्ण परिणिता की तरह मिलकर मेरे जड़ हाथ को अपने चेतन हाथ से उठाकर दिव्य श्रृंगार की पूर्ति की, उस सुदक्षिणा स्वर्गीया प्रिया श्रीमती मनोहरादेवी को सादर ।'** यह प्रिय निराला के संपूर्ण व्यक्तित्व और कृतित्व में साकार हुई है । इनकी सौंदर्यवादी एवं रहस्यवादी कविताओं में 'प्रिया' की वह छवि जीवंत हुई है ।

जैसे जीवन के क्षेत्र में, वैसे साहित्य के क्षेत्र में भी निराला ने अपने को स्थापित करने के लिए बड़ा संघर्ष किया है । 'सरोज स्मृति' की ये पंक्तियाँ निराला के साहित्यिक जीवन के आरंभिक दिनों की स्थिति की ओर संकेत करती हैं -

**लौटी रचना लेकर उदास**
**ताकता हुआ मैं दिशाकाश**
**बैठा प्रान्तर में दीर्घ प्रहार**
**व्यतीत करता था गुन गुनकर**
**संपादक के गुण, यथाभ्यास**
**पास की नोंचता हुआ धास**
**अज्ञात फेंकता इधर उधर**
**भाव की चढ़ी पूजा उन पर ।।**

निराला साहित्यिक एवं सामाजिक क्षेत्र में तथाकथित प्रतिष्ठियों के अहं का शिकार बराबर हुए हैं । एक ओर विश्वविद्यालय की डिग्री के बगैर इन्हें नौकरी कहीं नहीं मिली, दूसरी ओर जो नौकरी थी, उसे सलाम करके बाहर आ गए ।

साहित्य क्षेत्र में आए तो यहाँ भी उचित सम्मान नहीं मिला, फलतः साहित्यिक मज़दूरी करने लगे, दूसरे शब्दों में मात्र आर्थिक लाभ के लिए पसंदगी का ख्याल किए बिना लेखन-कार्य करने लगे । प्रकाशकों ने भी इनका बड़ा लाभ उठाया, किन्तु दिया कम !! निराला ने उन दिनों की अपनी आर्थिक स्थिति का वर्णन **'सरोज स्मृति'** में इस प्रकार किया है कि -

**धन्ये मैं पिता निरर्थक था ।**
**कुछ भी तेरे हित कर न सका ।**

रुपये पैसे के मामले में निराला इतनी तंगी का अनुभव कर रहे थे जिसके अभाव में उन्हें अपना बहुत कुछ खोना पड़ा ।

यह अलगबात है, निराला को हिन्दी साहित्य में जितनी ख्याति परवर्ती दिनों में मिली उतनी ख्याति कम लोगों की मिली है मगर स्थापित कवियों के बीच अपना नाम बनाने के लिए इन्हें बहुत कुछ सहना पड़ा । इस ओर निर्देश करते हुए निराला ने लिखा है - **'मैं बेकार था, 'सरस्वती' से कविता और लेख वापस आते थे । एक-आध चीज़ छपी थी । 'प्रभा' से मालूम हुआ, बड़े-बड़े आदमियों के लेख-कविताएँ छपती हैं । एक दफ़ा आफ़ीस जाकर बातचीत की उत्तर मिला - 'इसमें भारतीय आत्मा, राष्ट्रीय पथिक, मैथिली शरण गुप्त जैसे कवियों की कविताएँ छपती हैं .... मुँह लटकाकर लौट आया ।'**

## 23.4. निराला का काव्य कृतियाँ

निरालाजी की लिखी सर्व प्रथम हिन्दी कविता है **'जुही की कली'** जो सरस्वती से वापस आई थी । यह कविता बाद में **'माधुरी'** और **'मतवाला'** में छपी । इसी वर्ष उन्होंने अपनी दूसरी प्रसिद्ध कविता 'अधिवास' लिखी । निराला ने बंगला भाषा और साहित्य का गहरा अध्ययन किया था जिसकी ओर संकेत किया जा चुका है । निराला का 1920 में हिन्दी में लिखा विद्वत्तापूर्ण लेख **'हिन्दी और बंगला का तुलनात्मक व्याकरण'**, जो 'सरस्वती'

में प्रकाशित हुआ था जो कि डॉ.भगीरथ मिश्रजी के अनुसार साहित्यिक क्षेत्र में इनकी 'जय यात्रा' का प्रथम पदन्यास है । 'सरस्वती' में शुरु में उनकी कविताएँ क्यों छप नहीं पाई यह आश्चर्य है, मगर आचार्य द्विवेदी जी ने ही इनकी प्रतिभा को पहचाना था, इसलिए ही विवेकानंद सोसाइटी के मासिक 'समन्वय' का संपादन करने का दायित्व देकर कलकत्ता भेजा । यहाँ इनकी ख्याति बढ़ी, बड़े-बड़े लोगों से परिचय हुआ, प्रतिभा-प्रकाशन के लिए अच्छा मौका मिला । स्वामी वीरेश्वरानंदजी ने तो इन्हें 'हिन्दी का रवीन्द्र' कहा है ।

**'समन्वय'** का संपादन दो वर्ष तक करने के बाद निराला मतवाला में आए । इस पत्रिका के स्तंभ लेखों द्वारा निराला के लेखों ने हिन्दी के तथाकथित प्रतिष्ठित साहित्यकारों, कृतियों, भाषा एवं सांस्कृतिक क्षेत्र की विसंगतियों पर निर्भीकता से प्रहार किया, व्यंग्य कसा जिन्हें पाठकों ने बहुत चाहा भी । वैसे **'मतवाला'** में निरालाजी बहुत वर्षों तक न रहकर लगभग एक वर्ष रहे । किंतु इस अल्पावधि में उन्होंने अपने तर्कयुक्त सुस्पष्ट विचारों, मौलिक चिंतन, और नई संवेदनाओं से युक्त कविताओं एवं अभिव्यंजना विधान में किए नये नये प्रयोगों से सारे हिन्दी जगत को ऐसा प्रभावित किया कि इनको नजरंदाज करना असंभव हुआ था । छायावादी काव्यांदोलन तभी शुरु हुग्ग था जिसके आधारस्तंभों में से निराला भी एक थे जो सृजन के क्षेत्र में प्रयोग धर्मी थे । निराला का विरोध उन दिनों कई मसलों पर हुआ था मगर इन्होंने उनका ऐसा जवाब दिया कि विरोधी एकदम निरुत्तर हो गए । निराला 'मतवाला' में जब थे तभी उसके तुक पर अपने को 'निराला' बना लिया था और उसी नाम से कविता लिखेन लगे थे । निराला का जन्मनाम भी सूर्यकुमार था जिसे उन्होंने बाद के दिनों में सूर्यकांत कर लिया था ।

विद्रोह एवं विरोध निराला के व्यक्तित्व के अभिन्न अंश हैं । सो भी बेटी सरोज की मृत्यु के बाद तो निराला का संवेदनशील

हृदय ऐसा द्रवित हो उठा कि समाज के कठोर व्यवहारों के प्रति एकदम कठोर हो गए । समाज की यथार्थताओं पर दृष्टिपात करके वहाँ के तमाम प्रतिगामी तत्वों का विरोध करने लगे सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्र की विसंगतियों को उभारकर रखने के साथ ही साथ उनका अनावरण करते हुए व्यंग्य का प्रहार करने लगे । छायावादी कवियों में निराला ही ऐसे एकमात्र कवि हैं जिन्होंने समाज से घनिष्ठ संबंध रखे थे । पुनर्जागरण आंदोलनों के दौरान प्रतिपादित मूल्यों को साहित्य के द्वारा आम जनता तक पहुँचाने और प्रतिगामी मूल्यों का प्रखर शब्दों व्यंग्य करने का श्रेय इन्हीं को है । इस दृष्टि से देखा जाय तो प्रगतिवादी चिंतन के आरंभिक बीजों को निराला में सर्वप्रथम देख सकते हैं । डॉ.प्रेमशंकर कहते हैं - ''उन्होंने स्वच्छंदतावादी काव्य को विस्तृत आयाम दिए । इसलिए हिन्दी प्रगतिवाद उन्हें अपना प्रस्थान-बिन्दु स्वीकारता है और नया हिन्दी काव्य उनमें अपना पूर्वाभास देखता है । निराला की कृतियों में भारतीय नवजागरण अपनी पूरी सर्जनात्मकता में प्रतिफलित है ।' प्रकृति और आध्यात्म, सौंदर्य और कुरुपता, समाज और राष्ट्रजीवन के सभी पक्षों का व्यापक चित्रण निराला ने किया है ।

निरालाजी अपने निर्भीक विचारों से सदा वाद-विवादों का केन्द्र रहे चुके हैं । सत्य के सामने न स्नेह की ने व्यक्ति की गरिमा की उन्होंने परवाह नहीं की । महात्मा गाँधी एवं पंडित नेहरु तक उन्होंने विरोध किया, 'पंत और पल्लव' पुस्तक लिखकर पंत की कविताओं के प्रति गंभीर आक्षेप किए जिनसे सारा हिन्दी साहित्य चौंक उठा । मुक्त छंद संबंधी वाद-विवाद तो बहुत प्रसिद्ध है । ऐसे अनेक साहित्यिक एवं गैर साहित्यिक वाद-विवादों से निरालाजी सदा जुडे रहे । इन वाद विवादों के बावजूद भी उन्होंने अपने विपक्षियों के प्रति स्नेह भावना को भी बनाए रखा जो कि उनका विशिष्ट गुण था ।

निरालाजी को अपनी शक्ति और प्रतिभा का स्पष्ट बोध था,

ऐसी अस्मिता उनके व्यक्तित्व में थी जो कि किसी के सामने झुकती नहीं थी और साथ ही इस बात का दुख भी था कि लोग उन्हें उचित मान-सम्मान करना तो दूर किंतु चैन से जीने भी क्यों नहीं दे रहे हैं तथापि लौह पुरुष की भाँति निराला ने अपने जीवन की तमाम त्रासदियों का सामना किया । वे विष पीकर विषकंठ साबित हुए और विषकंठ शिव की भाँति लोक मंगल के प्रति समर्पित रहे ।

## 23.5. निराला की काव्य कृतियों का एक सर्वेक्षण

निरालाजी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे जिन्होंने अपने संघर्षमय जीवन को सृजनशीलता की आधारभूमि के रूप में स्वीकार किया । जीवन की यथार्थताओं से नहीं डिगे मगर अडिग रहकर सर्जना के क्षेत्र में असाधारण उपलब्धियों से नए प्रतिमान स्थापित किए और ऐसी युगांतरकारी रचनाएँ दी जिन्होंने आधुनिक हिन्दी को सर्वथा नई चेतना एवं संवेदनाएँ दीं । साहित्य की लगभग सभी महत्वपूर्ण विधाओं में निराला ने लिखा है और एतद्वारा उस विधा को समृद्ध बनाय है । उनकी रचनाएँ हैं -

**उपन्यास** - निरुपमा, चोटी की पकड़, प्रभावती, काले कारनामे, अलका, अप्सरा ।

**कथासंग्रह** - सुकुल की बीबी, चतुरी चमार, लिली, सखी, देवी ।

**रेखाचित्र** - कुल्ली भाट बिल्लेसुर बकरिहा ।

**निबंध-संग्रह** - प्रबंध-पद्य, प्रबंध प्रतिभा, चयन ।

**जीवनी** - भक्त ध्रुव, भीष्म, महाराणा प्रताप आदि ।

**समीक्षा** - रवीन्द्र कविता-कानन, पंत और पल्लव चाबुक ।

रामकृष्ण और विवेकानंद साहित्य का ही नहीं अपितु बंकिमचंद्र के लगभग सभी उपन्यासों का सुन्दर हिन्दी अनुवाद करके निराला ने अनुवाद के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया है । निराला ने तुलसी रामायण की टीका प्रस्तुत की है और मानस का खडीबोली रूपांतर भी किया है । 'महाभारत' का सरल हिन्दी अनुवाद इनके अनुवादों में से एक है । इससे ज्ञात होता है कि निराला एक सच्चे अनुवादक है ।

काव्यग्रंथ-अनामिका (1923), परिमल (1930), गीतिका (1936), अनामिका (1938), तुलसीदास (1938), कुकुरमत्ता (1942), अणिमा (1943), बेला (1943), नए पत्ते (1946), अर्चना (1950), आराधना (1953), गीत गुंज (1953), सांध्य काकली (1969) आदि ।

निराला प्रमुख रूप से कवि हैं जिनका काव्य संसार जितना विशाल है, उतना ही सरस एवं गंभीर भी है । यद्यपि छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद की समस्त खूबियाँ इन संग्रहों में पायी जाती हैं तथापि निराला मात्र वादी न रहे मगर राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा के अनन्य पोषक रहे । उदात्त मानवीय मूल्यों एवं शोषित जनसमूह की वाणी बनकर निराला ने अपनी सृजनधर्मिता निभायी है ।

निराला की काव्य यात्रा निरंतर परिवर्तनशील और विविधता से आपूरित है । युगबोध के प्रति सजग रहकर अपने समय और समाज को निराला ने बड़ी आस्था से चित्रित किया है । इस दृष्टि से निराला के सृजन कर्म को किसी एक काव्यांदोलन की सीमा में आबद्ध करके देखना, उनकी विराट संवेदना के प्रति न्याय संगत नहीं होगा । वैसे निराला की काव्य चेतना में वाद की अपेक्षा मनुष्य को महत्व पूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है । जैसा कि निराला ने स्वीकार किया है 'कविता मनुष्य मन की श्रेष्ठ रचना है ।'

निराला जी का पहला कविता संग्र है 'अनामिका' (1932) और अंतिम संग्रह 'गीत गूँज' (1954) । इन दो संग्रहों के बीच लगभग तीस वर्षों का अंतराल है जिसे शून्यवत न छोड़कर निराला की अनुभूतियों के विराट संसार ने सार्थक बना दिया है ।

## 23.4. अनामिका - निराला का प्रथम काव्य संग्रह

'अनामिका' निराला का प्रथम कविता संग्रह है जिसमें संकलित सात कविताएँ स्वच्छंदतावादी काव्यधारा का प्रतिनिधित्व

करती हैं । ये कविताएँ बाद में अन्य संकलनों में भी सम्मिलित की गई हैं । निराला का दूसरा कविता संग्रह 'परिमल' है जिसमें उनकी 1924 से 27 के बीच की लिखी 78 कविताएँ संकलित हैं । हिन्दी साहित्य की आधुनिक काव्यधारा के संदर्भ में इस संग्रह का अपना महत्व है क्योंकि इस संग्रह की कविताओं में निराला ने साहित्य की मुक्ति की बात की है - 'साहित्य की मुक्ति उसके काव्य में दिखाई पड़ती है । इस तरह जाति के मुक्ति-प्रयास का पता चलता है । धीरे-धीरे चित्रप्रियता छूटने लगती है । मन एक खुली प्रशस्तभूमि में विहार करना चाहता है ।' इस प्रकार हम देखते हैं कि कविता की मुक्ति की बात करनेवाला कवि कविता को कथ्य और शिल्प की दृष्टि से परंपरा की लीक से हटकर लिखने का संकल्प करता है । इस काव्य संग्रह की कविताओं के द्वारा निराला ने हिन्दी काव्य को नयी आत्मा दी और नया शरीर प्रदान किया, अर्थात् छायावादी रोमांटिक काव्यधारा से बाहर आने के साथ ही साथ मुक्त छंद का प्रयोग करके अपनी प्रगतिशील एवं प्रयोगधर्मी दृष्टि का परिचय दिया । 'परिमल' के प्रार्थना गीत 'जग को ज्योतिर्मय कर दो' में इस ओर संकेत है । कवि प्रार्थना करता है कि 'प्रिय, पृथ्वी के तरु-तृण-गुल्म जीवन्मृत हैं, इनमें नूतन जीवन भर दो ।' जीवन्मृत अवस्था में जो हमारी सामाजिक व्यवस्था है, हमारे मूल्य हैं जिनको बदलने की उत्कंठा निराला के व्यक्तित्व के रग-रग में है ।

## 23.5. परिमल - निराला का दूसरा काव्य कृति

'परिमल' की कविताओं में मिश्रित भाव की कविताएँ हैं । प्रकृति के मनोहरी चित्र हैं, रहस्यवादी निवेदनात्मक गीत हैं, श्रृंगार और प्रेम की कविताएँ हैं, वर्तमान के प्रति आस्था के छंद हैं, राष्ट्रप्रेम की उद्‌बोधक कविताएँ हैं, उनके जीवन दर्शन को प्रतिफलित करनेवाले पद्य हैं । निराला काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों को यहाँ देख सकते हैं । 'मौन, प्रिय के प्रति, यमुना के प्रति, अध्यात्मकफल, बादल राग, अधिवास, जुही की कली, जागो फिर

एक बार, महाराज शिवाजी का पत्र' आदि प्रसिद्ध कविताएँ 'परिमल' में संकलित हैं ।'

## 23.6. गीतिका - निराला का तीसरा काव्य संकलन

'गीतिका' में 101 गीत हैं जिनमें गीत तत्वों की प्रधानता है । निराला शास्त्रीय संगीत के अच्छे जानकार थे, इसलिए इन गीतों में गीत तत्वों का सुन्दर समायोजन देखा जा सकता है । डॉ.भगीरथ मिश्र का कहना है कि 'निराला ने इन गीतों को शास्त्रीय संगीत के आधार पर लिखा है । इन गीतों की स्वर-लिपि स्वयं निराला जी तैयार करनेवाले थे । परंतु परिस्थितिवश वे ऐसा न कर सके, अगर करते तो शायद बंगला के रवीन्द्रनाथ ठाकुर के गीतों के समान 'गीतिका' के गीत भी घर-घर गाये जाते । इतने विविध भाव से भरे वस्तुमूलक गीत हिन्दी में न के बराबर लिखे गए हैं ।' निराला-काव्य की वे सारी प्रवृत्तियाँ इस संग्रह की कविताओं में स्पष्ट उभर आई हैं जो परिमल में आई थीं । यहाँ के गीतों में निराला की दृष्टि अपने समाज की विषमताओं को रेखांकित करने की ओर है, प्रकृति के प्रति अपने रागात्मक संबंधों को जीवंत रखकर उसमें अपनी प्रियतमा, अपने आराध्य, अपने दर्शन को व्यक्त रूप में देखने का अद्‌भुत कौशल है । निरालाजी की कविताओं का विशिष्ट अंश यह है कि ये सामाजिक भावबोध को विस्मृत नहीं होने देते । 'वर दे वीणावादिनी वर दे' एक प्रार्थना गीत है जिसमें वे सामाजिक वर की कामना की प्रार्थना करते हैं -

**काट अन्ध उर के बंधन-स्तर**
**बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर**
**कलुष भेद तक हर प्रकाश भर**
**जगमग जग कर दे ।'**

प्रकृति की सुन्दर छवियों का चित्रण करते समय भी उससे यही आग्रह करते हैं कि यह धरा पर नया जीवन लाए । 'गीतिका' के गीतों में एक ऐसी दुनिया है जहाँ कवि की वैविध्यमय अनुभूतियाँ वैयक्तिक धरातल पर प्रकट होकर भी सामाजिक संदर्भ

को नकारती नहीं हैं । इन गीतों में कवि नए समाज के निर्माण की परिकल्पना कर रहा है और उन मूल्यों की जाँच-पडताल कर रहा है जो जीर्ण हुए हैं ।

## 23.9. अनामिका - निराला का चौथा काव्य संकलन

'अनामिका' का प्रकाशन निरालाजी की काव्ययात्रा का दूसरा एवं महत्वपूर्ण चरण कहा जा सकत है, क्योंकि इस संकलन की अधिकांश कविताएँ यथार्थमूलक हैं । स्वच्छंदवादी एवं कल्पना की रंगीन दुनिया से हटकर निरालाजी ने वास्तविकता की यथार्थ भूमि पर खड़े होकर अपने समय और समाज की ओर देख रहे हैं । सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन की विसंगतियों को देखकर उनकी प्रखर आलोचना और व्यंग्य करने लगते हैं । 'सरोज स्मृति', दान, मित्र के प्रति, देखा, सच है, तोडती पत्थर, दिल्ली, राम की शक्तिपूजा जैसी कविताएँ अपनी अपूर्व व्यंजक शक्ति के कारण पूरे समाज की विसंगतियों को रेखांकित करने में सफल हुई हैं । 'अनामिका' संगह की कविंताओं की खास बात यह है कि यहाँ निरालाजी व्यापक कैनवास पर चिंतन और अभिव्यंजना करने की ओर आस्था दिखा रहे हैं, उनकी सृजन धर्मिता बृहत्तर प्रयोग करने की ओर उन्मुख रही है । वैसे, महाकाव्य की रचना करने की अद्‌भुत प्रतिभा और क्षमता रखने के बावजूद भी निराला महा काव्य लिख नहीं पाए जिसके लिए उनका विक्षुब्ध मन, सामाजिक परिवेश तथा व्यक्तिगत अशांत जीवन उत्तरदायी है । निराला ने अनेक लंबी कविताएँ लिखी हैं जिनमें महाकाव्य की वस्तु को देख सकते हैं । इन लंबी कविताओं में निराला के आंतरिक संघर्ष को बाहर के संघर्ष से तादात्मता करते हुए हम देखेते हैं । 'सरोज स्मृति' और 'राम की शक्तिपूजा' इसके उत्तम उदाहरण हैं । 'अनामिका' की कविताओं में प्रकृति, प्रेम श्रृंगार और आध्यात्म से कवि रुचि बिलकुल हट गई हो, ऐसी बात तो नहीं है, किन्तु समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता प्रखर रूप से जागृत हुई है ।

## 23.10. कुकुरमत्ता - - निराला का पाँचवाँ काव्य संकलन

'अनामिका' की कविताओं में निराला जी की बदलती हुई चिंतनधारा और प्रगतिशील दृष्टि का परिचय जो मिलता है, उसका विकास परवर्तीकाव्य में देखा जा सकता है, खासकर 1942 में प्रकाशित 'कुकुरमत्ता' संकलन में । इस दौरान देश के राजनैतिक वातावरण में आजादी की माँग को लेकर आंदोलन होने लगे थे, दूसरी ओर पूँजीवादी संस्कृति अपनी चरमसीमा पर थी, शोषितों की पीडा का कोई अंत नहीं था, मार्क्स की विचारधारा से प्रेरित प्रगतिशील चिंतनधारा आदि ने निराला के व्यक्तित्व को काफी हद तक प्रभावित किया था । तब तक प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना भी होकर इसके अधिवेशन भी संपन्न हुए थे । 1936 में संपन्न अधिवेशन का अध्यक्ष भाषण देते हुए प्रेमचंद ने कहा था कि **'हम साहित्य को केवल मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नहीं समझते । हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें उच्च चिंतन हो, स्वाधीनता का भाव हो, सौंदर्य का सार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो जो हममें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलाये नहीं, क्योंकि अब और ज्यादा सोना मृत्यु का लक्षण है ।'** प्रेमचंद का यह भाषण ऐसा उद्‌बोधक था कि इसने तत्कालीन लेखक समुदाय के कंधों पर उनकी जिम्मेदारी का दायित्व डाला । निराला तो बहुत पहले से ही किसान आंदोलनों में शामिल हुए थे, सामंती संस्कृति के भयावह रूपों के प्रत्यक्षदर्शी थे । इस दृष्टि से देखा जाय तो प्रगतिशील दृष्टि इनके काव्य में शुरु से रही है जिसका चरमविकास 'कुकुरमत्ता' में देखा जा सकता है । 'कुकुरमत्ता' प्रगतिशील विचारधारा की जितनी सार्थक लंबी कविता है, उतना ही प्रखर व्यंग्य इस कविता में है । सर्वहारा वर्ग की पीड़ा, दर्द और संकट की अभिव्यक्ति 'कुकुरमत्ता' कविता में मार्मिक ढंग से हुई है । यहाँ कुकुरमत्ता-अभिशप्त वर्ग का प्रतिनिधि है, तो गुलाब शोषकों का । आधुनिक समाज का संघर्ष वास्तव में इन दो वर्गों के बीच है । एक

वर्ग का खून पीकर दूसरा वर्ग बड़ा हुआ है । इस वर्ग का संबोधन करते हुए शोषक वर्ग का प्रतिनिधि कुकुरमत्ता कहता है -

**'अबे, सुन बे, गुलाब !**
**भूल मत जो पायी खुशबू, रंगोआब**
**खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट**
**डाल पर इतराता है कैपिटलिस्ट'**

इस प्रकार पूरी कविता में कैपटलिष्ट वर्ग पर तीव्र व्यंग्य कहा गया है । निराला जी ने जिस ढंग से प्रस्तुत कविता में उच्च वर्ग पर प्रहार किया है, वह हिन्दी साहित्य के संदर्भ में सर्वथा नयी बात थी । मगर इस कविता के प्रति जो न्याय होना था वह नहीं हुआ । डॉ.प्रेमशंकर इस कविता की महत्ता को रेखांकित करते हुए लिखते हैं - **'कुकुरमत्ता निराला के परिमसकाल की रोमानी दुनिया का लगभग विस्मरण है । देश के दूसरे दशक की तुलना में पाँचवे दशक की दुनिया कितनी बदल गयी थी । निराला जीवन-यथार्थको निकट से देख-भोग चुके थे, वे कल्पना से चलकर अधिक ठोस जमीन पर आ पहुँचे थे ।'** 'कुकुरमत्ता' को एक साधारण हास्य व्यंग्य की कृति अथवा एक प्रयोग मात्र कहकर संबोधित करना इस रचना की वास्तविकता-सार्थकता से किनाराकशी करना या बायें हाथ की, आधे मनवाली चालू प्रशंसा है । दुःख है कि स्वच्छंदतावादी काव्य को नया मोड देनेवाली इस रचना को साहित्य के इतिहास में नयी दिशा के जिस सूत्रपात के रूप में समादृत होना चाहिए था, वैसा नहीं हुआ । निराला के आज़ाद, विद्रोही व्यक्तित्व की तरह उनका 'कुकुरमत्ता' भी गलतफहमियों का शिकार हुआ ।' तथापि 'कुकुरमत्ता' एक सार्थ एवं प्रभावकारी लंबी कविता है जिसकी महत्ता को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है । क्योंकि कुकुरमत्ता केवल पूँजी वादी संस्कृति के अभिशापों पर ही नहीं अपितु उसके बाहर की दुनिया का भी स्पर्श करती है ।

## 23.11. अणिमा - निराला का छटे काव्य संकलन

'अणिमा' संकलन निरालाजी के काव्य के विकास की दिशा में एक और महत्वपूर्ण आयाम प्रस्तुत करता है । सांस्कृतिक भारत की गरिमामय परंपरा का अन्वेषण करने के साथ साथ वर्तमान की यथार्थताओं के प्रति कवि का गर्व और विषदा यहाँ की कविताओं में है । 'अणिमा' में पूर्ववर्ती संग्रहों की कविताओं की प्रवृत्तियाँ भी नज़र आती हैं तथापि प्रसाद, शुक्ल, रैदास, बुद्ध, विजयलक्ष्मी, महादेवी, स्वामी प्रेमानंद पर लिखी गई लंबी कविताओं में उनके व्यक्तित्व के प्रति निराला के श्रद्धा-सुमन हैं । 'सहस्राब्दि' इस संकलन की एक विशिष्ट कविता है जिसमें भारत के इतिहास और सांस्कृतिक परंपरा के प्रति ध्यानाकर्षण करने का प्रयत्न किया गया है । 'अणिमा' की रचनाएँ यथार्थोन्मुख हुई हैं । प्रार्थना परक गीतों में उनकी जनवादी दृष्टि को ही देख सकते हैं । यथा -

**दलित जन पर करो करुणा ।**
**दीनता पर उतर आये**
**प्रभु तुम्हारी शक्ति करुणा ।**

'अणिमा' की रचनाओं में निराला के चिंतनशील व्यक्तित्व के जीवन दर्शन, प्रौढ़ मस्तिष्क की वैचारिक प्रतिबद्धता, जीवन-संघर्ष को निकटता से साक्षात्कार करने वाले और वर्तमान की विसंगतियों के कारण हताश एवं विषाद भाव को व्यक्त करते हुए निराला को देख सकते हैं 'दुनिया बाजार है, सब सौदा करते हैं', 'चूँकि यहाँ दाना है, इसलिए दीन हैं दीवाना है ।'

**'गहन है यह अंधकारा**
**स्वार्थ के अवगुंठनों से**
**हुआ है लुण्ठन हमारा ।'**

जैसी कविताएँ सामाजिक व्यवस्था पर चोट करती हैं ।

यहाँ की भाषा और मुहावरों में भी परिवर्तन देखा जा सकता है ।

## 23.12. बेला - निराला का सातवाँ काव्य संकलन

'बेला' (1943) संग्रह की कविताओं में प्रमुख रूप से अनामिका, कुकुरमत्ता और अणिमा की भावभूमि का ही विस्तार हुआ है, तथापि जहाँ तक भाषा एवं अभिव्यक्ति का सवाल है, प्रस्तुत संग्रह में फारसी, उर्दू के शैली विधान को अपनाया गया है । उर्दू और हिन्दी शब्दावलियों का सुन्दर प्रयोग यहाँ हुआ है । जैसे अन्य संकलनों में, वैसे इस संकलन में भी विनय, श्रृंगार, दर्शन, व्यंग्य, राष्ट्रीय भावनापरक गीत सम्मिलित हैं । किन्तु सामाजिक समस्याओं एवं विद्रूपों को उभार कर उनकी आलोचना एवं व्यंग्य करने की उनकी सहज काव्य प्रवृत्ति 'बेला' में भी देखी जा सकती है ।

## 23.13. नए पत्ते - निराला का आँठवाँ काव्य संकलन

1946 में 'नए पत्ते' का प्रकाशन निराला के काव्य जीवन का एक महत्वपूर्ण मोड है । क्योंकि यह संकलन उस संक्रातिकाल में प्रकाशित हुआ था जबकि देश नाना प्रकार के संकटों से गुज़र रहा था, तभी द्वितीय महायुद्ध समाप्त हुआ था, राष्ट्रीय आंदोलन अपनी चरम बिंदु पर था, साम्राज्यवादी ताकतों का अंत नहीं हुआ था, पूँजीवादी यानी महाजनी सभ्यता का शिकार होकर ग्रामीण प्रदेशों के कृषकों एवं आम जनता की दशा बड़ी दयनीय हो गई थी । इन तमाम परिस्थितियों के साक्षी बनकर गद्य के क्षेत्र में प्रेमचंद लिख रहे थे तो कविता के क्षेत्र में निराला । इसके पहले प्रकाशित 'अनामिका' और 'कुकुरमत्ता' की कविताओं में सामाजिक यथार्थताओं का चित्रण करने में निराला सफल हुए थे, हमारी सामाजिक राजनैतिक और धार्मिक क्षेत्र की विसंगतियों पर व्यंग्य प्रहार कर चुके थे, 'नए पत्ते' की इन कविताओं में उनका आक्रोश तीव्रतम हुआ है । प्रकृति, श्रृंगार, अध्यात्म में 'नए पत्ते' का कवि-मन रम नहीं रहा है क्योंकि वह वास्तविक जगत वर्तमान मनुष्य के प्रति चिंतित है जो कि सब कुछ खो चुका है । अपने समय की शोषित जनता की भूख एवं गरीबी को वाणी देने में तत्पर

निराला अपने समय के जीवंत मशाल के रूप में काव्यक्षत्र में देदीप्यमान हो उठे । एक सहज स्निग्ध संवेदनशील हृदय की कोमल भावनाएँ यहाँ चिनगारियाँ बनकर प्रज्वलित हुई हैं । सही अर्थ में निराला की विद्रोही प्रवृत्ति और ग्रामीण जीवन की संघर्षभरी यातना की काव्याभिव्यक्ति 'नए पत्ते' में हुई है । रानी और कानी, खजोहरा, मास्को डायलाप्स, गरम पकौडी, कुत्ता भौंकने लगा आदि इस संग्रह की सात कविताएँ हैं । 'नए पत्ते' की कविताओं के संबंध में प्रेमशंकरजी लिखते हैं - 'नए पत्ते' मे निराला जैसे अपने ही पिछले सौंदर्यलोक के विरुद्ध खड़े हैं, प्रकृति और सौंदर्य के चित्र गायम हो चुके हैं, आध्यात्म दबा पड़ा है । एक संघर्ष गाथा उनके सामने है, जीवन यथार्थ से जूझते हुए समाज की । यदि निराला के केवल वैयक्तिक दर्द का सवाल होता तो वे बृहत्तर समाज से इतना जुड न पाते ।'

## 23.14. निराला की अन्य काव्य कृतियाँ

निराला की सृजनयात्रा का तीसरा आयाम 'अर्चना' (1950), 'आराधना' (1953) और 'गीत गुज' (1954) की कविताओं में देखा जा सकता है । इस बिंदु तक आते आते निराला भौतिक रूप से थके हुए से लगते हैं । फलतः आध्यात्मिक चिंतन में तल्लीन, परमात्मा की शरण में जाने की उत्कंठा इन कविताओं में है । निराला के ये गीत राग से विराग की ओर मुडनेवाली कविताएँ हैं, लौकिक से अलौकिक भावभूमि की ओर प्रस्तान करनेवाली कविताएं हैं । 'चोट खाकर राह चलते', 'हारता है मेरा मन विश्व के समर में जब', 'मरा हूँ हज़ार मरण', 'भवसागर से पार करो हे' और अन्यान्य कविताएँ निराला की थकी हुई मनस्थिति का परिचय कराती हैं । 'कुकुरमत्ता' और 'नए पत्ते' का कवि जो कि युग के संघर्षों का डटकर सामना कर चुका था, अपने उत्तरकालीन कविताओं में एकदम निराश और मोह भंग का शिकार होकर प्रार्थनाभाव के गीते लिखने में जुट गए, यह आश्चर्य की बात है । अपने से कल्पित समाज को साकार होते न देखकर

इन संग्रहों का कवि खिन्न हुआ है, उस मनस्थिति की ओर ये पंक्तियाँ संकेत करती हैं -

**'दुरित करो नाथ अशरण हूँ गहो हाथ,**
**हार गया जीवन रण छोड गए साथी जन**
**एकांकी, नैश-क्षण, कण्टक पथ, विगत क्षण'**

निविड विपिन, पथ अराल, भरे हिंस जंतु ब्याल निराला के इन निवेदनात्मक गीतों में पलायन नहीं है किंतु तटस्थता है निर्लिप्तता है । संसार के प्रति इनकी कोई शिकायत नहीं है, शिकायत है उस समाज के प्रति जिस समाज में जड-मूल्य हैं, मानवीय अंतःकरण का अभाव है । इसलिए ही कहते हैं - **'मानव जहाँ बैल घोड़ा है, कैसा तन मन का जोड़ा है ।'** मानव-समुदाय की उन्नति की आकांक्षा को चाहनेवाला यह कवि अपने इन प्रार्थना गीतों में मानव भविष्य के प्रति प्रतिबद्ध है ।

## 23.15. सांध्य काकली काव्य कृति : एक विश्लेषण

सांध्य काकली (1969) में निरालाजी के देहावसान (15 अक्टूबर 1961) के बाद उनके अंतिम समय तक रचित कविताएँ सम्मिलित हैं । यहाँ प्रकृति, प्रेम, आध्यात्म, वैचारिक, विषाद और विनय संबंधी कविताएँ हैं । इस संग्रह की अंतिम कविता विशेष रूप से उल्लेखनीय है जो कि आत्मकथात्मक है । इसमें उनकी निर्लिप्त और निर्विकार मनोभूमि को देख सकते हैं जो कि यहाँ के राग से विमुख होकर विराग की ओर गतिशील है । यहाँ निराला अपने को शरशय्या पर सोए हुए भीष्म कहते हैं । जैसे भीष्म, वैसे निराला अपनी चहुँ ओर की पृथ्वी को नितांत सुरक्षित देखना चाहते हैं । इस संग्रह की कविताओं में एक पक्व मन के उद्‌गार और जीवन के उतार-चढ़ावों की समीक्षा प्राकृतिक बिंबों के सहारे करते हुए निराला की अवसादमयी दृष्टि को देख सकते हैं ।

इस प्रकार इम देखते हैं कि निराला की लंबी सृजन यात्रा 1913 से 1961 तक फैली हुई है । इस यात्रा के दौरान निराला

ने बहुरूपी जीवन के बहु आयामों को देखा है । अपनी सैकडों कविताओं में उन्होंने अपने समय और समाज के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को बड़े सार्थक रूप में सिद्ध किया है । छायावाद के प्रमुख हस्ताक्षरों के बारे में अज्ञेयजी का यह कथन इनके कृतित्व का मार्मिक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है - 'चिंतन प्रसाद' ने अधिक किया । काव्य 'निराला' का श्रेष्ठ है । शब्द का ज्ञान पंत का सबसे सूक्ष्म है । प्रसाद पढ़ाये जायेंगे, पंत से सीखा जायेगा, निराला पढ़े जायेंगे ।

## 23.16. बोध प्रश्न

1. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में एक लेख लिखिए ।
2. निराला की काव्य कृतियों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।

## NOTES

## NOTES

# इकाई चौबीस : निराला के काव्य की प्रवृत्तियाँ

## इकाई की रूपरेखा


24.0. उद्देश्य

24.1. प्रस्तावना

24.2. निराला के काव्य की प्रवृत्तियाँ

24.2.1. आध्यात्मचिंतन-विराग की आराधना

24.3. निराला के काव्य में प्रेम और श्रृंगार

24.4. निराला के काव्य में व्यंग्य

24.5. निराला के काव्य में राष्ट्रीय चेतना

24.6. बोध प्रश्न

## 24.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने निराला की जीवनी, व्यक्तित्व और काव्य कृतियों के बारे में अध्ययन किया । तत्पश्चात् उनसे रचित काव्य संकलनों के बारे में जानकारी भी प्राप्त कर लीं ।

## 24.1. प्रस्तावना

इस इकाई में आप निराला की काव्य की प्रवृत्तियाँ तथा उनके काव्य प्रेम-श्रृंगार और व्यंग्य आदि के बारे में अध्ययन करेंगे । इससे क्रांतिकारी निराला की प्रवृत्तियों के बारे में ज्ञान भी प्राप्त करनेवाले हैं ।

## 24.2. निराला के काव्य की प्रवृत्तियाँ

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार ''साहित्य का प्रयोजन आत्मानुभूति है ।'' हमारे विचार में निराला जी का समग्र व्यक्तित्व एवं कृतित्व एक सुख-दुःख समन्वित सहज-गम्भीर जीवात अनुभूति ही है । एक ऐसी अनुभूति, जिसका खट्टा-मीठा अनुभव किये बिना आधुनिक काव्य-यात्रा अधूरी ही रह जाती है । यह आत्मानुभूति ही काव्य और कला का अन्तःपरिवेश है । यह परिवेश या अनुभूति विशिष्ट आयामों की देन होती है और ये आयाम यों ही प्राप्त नहीं हो जाते । उन आयामों के पल्लवन के लिये बीज को मिट्टी के अंधकार में सिमिट कर, सीमित होकर सड़ना-गलना, सिंचना-पुसना पड़ता है, तब कहीं जा कर उसे स्वरूप एवं आकार प्राप्त होता है । उस आकार में बल्कि समूचा अपनत्व अन्तर्हित रहता है । तभी उसमें उन पोषक तत्वों का संचयन हो पाता है, जो अपनी संप्रेषणीयता के कारण जन-मानस को, उसके शरीर को भी स्वस्थ स्वर एवं स्वरूप प्रदान करने में सक्षम होता है । उस संप्रेषणीय तत्व में कृषक भी आत्मा, बुद्धि-वैभव और मन का चिद्रूप, हार्दिकता सभी कुछ समाहित रहता है । यह समहिति ही मिलकर वह भाव बनती है, जिसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हृदय की मुक्तावस्था में रस-दशा कह कर

उसकी वाणी से हाने वाले शब्द-विधान को कविता' कहा है । निराला जी को वह भूमि, हृदय की वह मुक्तावस्था पूर्णतया प्राप्त थी, इसी कारण के एक सफल कवि-फर्मा-कृषक प्रमाणित हो सके । उनका समूचा व्यक्तित्व इस धरती की मिट्टी के साथ पूर्णतया जुड़ा हुआ था । इसी कारण उनके व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों में धरा की सोन्धी सुगंध भी है और उष्णोत्ताप से दीकती चट्टानों की महक भी । सुरम्य घाटियों से आविल चट्टानों के सीने को उघाड़ कर अविरत-अविरल प्रवाहित हो उठने वाले निर्झरों का झर-निनाद भी है और दार्शनिकता के ऊबड़-खावड़ पथों पर भी उसी अविरल गति से प्रवाहित हो सकने की प्रवहमयता भी है । जिस गति से वे जीवन के समतल पर अविश्रान्त गतिशील दिखाई देते हैं, वही गतिशीलता अपनेपन की उन्मादक अलसता के साथ दुरूह घाटियों में भटकते हुए भी देखी जा सकती है । एक ओर यदि वे 'ओंकारनाद' को मुखरित करते हुए सुन पड़ते हैं, तो दूसरी ओर उद्दाम वेग वाले पवन का रूप धारण कर 'जूही-नायिका' से तरल-सरल छेड़-खानी करते हुए भी देखे जा सकते हैं । एक ओर यदि वे भूख से तड़पती मानवात्मा को 'पीठ-पेट दोनों मिलकर हैं एक' के कंकाल-वेश में भावातुर हो कर देखते-परखते हुए दिखाई देते हैं, तो दूसरी ओर उनके ऊर्जास्वित मन-मस्तिष्क की उर्वरा कल्पना उन दृष्टियों को पहचानना भी जानती हैं 'जो मार खा कर रोई न थीं ।' एक ओर यदि उनकी आँखें 'करुणा-रस से पुलकित' होकर 'मुदु रसावेश में हा-हाकार का गुंजार' करते हुए दिखाई देती हैं तो दूसरी ओर माँ के चरणों पर 'सकल श्रेय-श्रम-सिंचित फल' अर्पित करके (माँ को) यह करकर आश्वासन देते हुए भी दृष्टिपथ होते हैं कि - 'मुक्त करूँगा तुझे अटल ।' इतना ही नहीं ऊँची अट्टालिकाओं को 'आतंक भवन' कहकर वह वहाँ के निवासियों को 'कुकुरमुत्ते' के रूप में व्यंग्य-विनोद भरे स्वरों में चुनौती देते हुए 'जग के दग्ध हृदय पर निर्दय विप्लव की प्लावित माया' विप्लव और क्रांति का आह्वान करते हुए भी दिखाई देते हैं । और फिर देश की ज्ञान

जागृति के वैताल बन कर वे एक नये प्रभात के आगमन भी सूचना देते हुए गा उठते हैं :

> ''जागो जागो, आया प्रभात
> बीती वह, बीती अन्धरात
> झरता भर ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वांचल ।''

यह सारी व्यापकता, यह समूचा वैचित्र्य जीवन की इसी मिट्टी से जुड़ा हुआ है, जिस पर हम सब निवास करते हैं । उसी बीज का पल्लवन है, जो जीवन एवं धरती के महान गायक निराला की अंतश्चेतना में जीवन के संस्कारों ने वंचित किया था । परिस्थितियों के वैषम्य ने जिसे सींचा, संघर्ष ने संजोया और निरंतर पराजयों ने भी, जिसे अपने कर्मठ हाथों से उठा कर व्यापक जीवन के लिये अर्पित कर दिया । इस अर्पण में जो स्वयं टूट गया, छितरा गया, बिखर कर अपने मूल तत्वों में समा गया, पर झुका या झरा कभी नहीं । कितना व्यापक एवं उदात्त है उस महान विष-पायी, पर सुधा-बिन्दु-सर्जक का व्यक्तित्व । श्रीमती महादेवी वर्मा के शब्दों में - ''उनका व्यक्तित्व उनके काव्य से कम निराला नहीं है । वह अत्यन्त जटिल और बहुत से विरोधों का सामजंस्य है ।''

### 24.2.1. आध्यात्मचिंतन-विराग की आराधना

आध्यात्मचिंतन निरालाजी के काव्य का प्रधान स्वर है । उनके आध्यात्मिक व्यक्तित्व के निर्माण में उनके अध्ययन, चिंतन-मंथन एवं परिवेश का महत्वपूर्ण स्थान है । निरालाजी नें भारतीय वेदांत और उपनिषद्-साहित्य का गंभीर अध्ययन किया था । रामकृष्ण मिशन में रहने के कारण रामकृष्ण के विराट् व्यक्तित्व और दर्शन से वे प्रभावित हुए थे । इस ओर निर्देश करते हुए उन्होंने लिखा है कि आध्यात्मिक पाठक की हैसियत से मैं यह बात जोर देकर कह सकता हूँ कि विश्व के आध्यात्मिक साहित्य में कोई मनुष्य इतना अद्भुत, महान, तपस्वी, जितेन्द्रिय तथा अपार भावराशि संपन्न नहीं मिलता, जिसकी तुलना श्री रामकृष्ण से की

सके, न इतना बड़ा उत्तरदायित्व लेकर कोई आया है ।' स्वामी सारदानंद निरालाजी के दीक्षा गुरु थे यहाँ तक कि निराला ने अपने को उनका यंत्र माना है । निराला लिखते हैं कि **'स्वामी सारदानंद रामकृष्ण मिशन के एक संसार प्रसिद्ध व्यक्ति हैं । उन्हें लोग महावीर की विभूति संपन्न मानते हैं । अब वह संत हैं उनका शरीर रामकृष्णमय हो गया हे, मैं उनका यंत्र हूँ ।'** इस प्रकार अध्ययन, चिंतन और महान साधकों के संग में रहने के कारण निरालाजी के व्यक्तित्व में भी यह जिज्ञासा कि 'कोऽहं' कार्य करती रही है । परमसत्ता के अस्तित्व को दृश्यमान जगत के कण-कण में व्याप्त देखने और इस असीम जगता के उस पार में छिपे सत्य को देखने की जिज्ञासा इनकी कविताओं में है । इस अखिल विश्व को उसमें और इसमें उस अखिल विश्व को देखने का कौतूहल इनकी दार्शनिक कविताओं में है -

**तुम हो अखिल विश्व में**
**या यह अखिल विश्व है तु में**
**अथवा अखिल विश्व तुम एक**

इस जिज्ञासा के उत्तर में वे यही पाते हैं कि सारे विश्व में उसकी सत्ता विद्यमान है जिसकी कृपा के बिना तृण भी नहीं हिलता है -

**जिधर देखिये श्याम विराजे**
**श्रुति के अक्षर श्याम देखिये**
**दीपशिखा पर श्याम निवाजे**
**श्याम तामरस, श्याम सरोवर**
**श्याम अनिल, छवि श्याम संवाजे ।**

निराला अद्वैत दर्शन के प्रतिपादक हैं । शंकर के अद्वैत सिद्धांत का पूरा प्रभाव इनके व्यक्तित्व पर है । ब्रह्म को चरम सत्य मानना, उस ब्रह्म से जगत की सृष्टि मानना और अंततोगत्वा जगत का विलीन ब्रह्म में होना स्वीकार करना-निराला के अद्वैत दर्शन का सार है जोकि शंकराद्वैत का सीधा प्रभाव है । जगत के सभी कार्य-कारणों का नियंता वही है । निरालाजी इस बात की पुष्टि

करते हैं और उनके काव्य मुखेना यह देखा सकते हैं -

**जीवन की विजय, सब पराजय**
**चिर अतीत आशा सुख, सब भय**
**सब में तुम, सब में तुम तन्मय ।**

परमात्मा के अस्तित्व को अपने में खोजने को निराला कहते हैं क्योंकि वह मंदिरों और मज़िदों में नहीं है । इस सत्य का दर्शन तब तक नहीं होता है जब तक माया का परदा छाया रहता है । इस माया को निराला ने माना है और उसकी भर्त्सना की है, इस माया को साधना पथ का रोड़ा माना है । यह रोड़ा जब हट जाएगा तो परमात्मा जो हर एक के हृदय में निवास करता है, स्पष्ट दिखाई देगा, इसलिए ही वे कहते हैं -

**पास हीरे, हीरे की खान**
**खोजता कहाँ और नादान**
**कहीं नहीं सत्य का रूप**
**अखिल जग एक अंधतम कूप ।**

निराला की रहस्यानुभूति की संवेदनात्मक आधारभूमि भी यह अद्वैतदर्शन ही है । उस निराकार निर्गुण सत्ता को जैसे कबीर आदि संत कवि अपनी प्रियतमा अथवा जननी के रूप में संबोधित करके उससे एकाकार होने की अनुनय करते हैं, उनसे बिछुडकर बिरहानुभूति का अनुभव करते हैं उसी प्रकार निराला की कविताओं में भी एक ऐसे भावुक एवं संवेदनशील आत्मा की व्यथा, कसक और विरह की पीड़ा को देखते हैं जोकि अपने प्रियतम से मिलने के लिए आकुल और व्याकुल है, माँ की गोद में जाने के लिए लालाचित है । जहाँ तक रहस्यानुभूति का सवाल है भक्त कवियों की विनय भावना निराला की कविताओं में भी देखी जा सकती है । उस परम सत्ता को महान और अपने को अकिंचन मानने की भक्त कवियों की विनय भावना निराला की कविता में इस प्रकार अभिव्यक्त हुई हैं -

तुम तुंग-हिमालय-श्रृंग
और मैं चंचल गति सुर सरिता
तुम विमल हृदय उच्छ्वास
और मैं कांत कामिनी कविता

प्रस्तुत कविता में अपने को उस परमात्मा का अभिन्न अंश बताने का प्रयास भी किया गया है । परमात्मा हिमालय का श्रृंग है तो आत्मा उस श्रृंग से प्रवाहित हो रही सरिता है । वह उच्छ्वास है तो यह कविता है ।

निराला न केवल अद्वैत दर्शन के प्रतिपादक हैं, अपितु मध्ययुग के भक्त कवियों के संस्कारों को पाथेय के रूप में साथ ले आये हुए परम भक्त भी हैं । उनका भक्त हृदय उनकी काव्य यात्रा के साथ एक अंतःसलिला की भाँति विद्यमान रहकर उनके अंतिम दिनों में उनकी जीवन यात्रा का अभिन्न अंग बन गया है । एक श्रेष्ठ भक्त के तमाम गुणों को अपने में समेटकर निराला भगवद्शरण में जाते हैं । पानी थकान को मिटाने और जगत के दुख को निवारण करने की प्रार्थना करने लगते है । निराला के इन भक्ति गीतों में शांतरस घनीभूत हुअ है । इस दृष्टि से देखा जाय तो निराला आधुनिक युग के एक महत्वपूर्ण भक्त कवि भी है ।

## 24.3. निराला के काव्य में प्रेम और श्रृंगार

निरालाजी के काव्य में प्रेम और श्रृंगार की अभिव्यक्ति एक उदात्त भाव भूमि पर हुई है । अनामिका, परिमल, गीतिका-संग्रहों की कविताओं में प्रेम और श्रृंगारपूरक गीतों की संख्या ज्यादा हैं जब कि परवर्ती संग्रहों में कम । उनकी काव्य यात्रा का पूर्वार्द्ध रागमय है तो उत्तरार्द्ध विराग से युक्त है । राग और विराग के बीच उनका जीवन संघर्ष है ।

निराला के काव्य में चित्रित प्रेम कहीं भी अपनी मर्यादा का

उल्लंघन नहीं करता है । लौकिक में अंकुरित होकर अलौकिक परिवेश में अपनी परिणति पाना, वासना से मुक्त होकर स्वच्छ प्रेम का प्रतिपादन करना निराला के प्रेमगीतों की सबसे बड़ी विशेषता है । निराला के गीतों में सौंदर्य आराधना का और प्रेम पूजा का साधन है । इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो निराला के प्रेमगीतों को पढ़ना अपने में एक विशिष्ट अनुभव है ।

निराला प्रेम को मात्र इन्द्रिय अनुभूति तक सीमित न रखकर उसे अलौकिक भावभूमि तक ले जाते हैं । उन्होंने प्रेम को दो हृदयों को एक सूत्र में बाँधने का एक असूत्र सूत्र माना है -

**'प्रेम सदा ही तुम असूत्र हो**
**उर उर के हीरों का हार'**

निराला के काव्य में प्रेम एक शक्ति है, प्रेरणादायिनी तत्व है । पत्नी मनोहरादेवी के प्रेम ने उन्हें ऐसा बाँधा था कि उस बंधन की डोर से विमुक्त होना, अथवा उसे विस्मृत कर देना असंभव था । अपनी उस प्रिया के प्रति निराला ने बराबर कृतज्ञता प्रकट की है । यहाँ तक कि 'गीतिका' को उनकी स्मृति को समर्पित किया है । निराला के काव्य में प्रेयसी शब्द का प्रयोग बार-बार हुआ है । इस शब्द के प्रयोग से हम इस निर्णय पर नहीं आ सकते हैं कि निराला की कोई एक प्रेयसी थी । निराला ने शुद्ध एवं पवित्र जीवन चलाया था, आध्यात्मिक प्रवृत्ति उनमें थी । इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो उनके जीवन में एक अलग प्रेयसी की कल्पना कर लेना भी बेतुक लगता है । ऐसी प्रेम के प्रति, प्रिया के प्रति, मरण-दृश्य और अन्य अनेक गीतों में जो नारी है वह पत्नी है ।

निराला की श्रृंगारपरक कविताओं में मिलन के चित्र विरह के चित्रों की तुलना में बहुत कम हैं । संयागे श्रृंगार के चित्र चुंबन, शेफालिका, जुही की कली आदि कविताओं में है तो विरहानुभूति का वर्णन कई कविताओं में है । विरह वर्णन में कवि ने बड़ी

तल्लीनता एवं गहरी अनुभूति दिखाई है । व्यक्तिगत जीवन में उन्होंने जो विरह भोगा था, उसकी करुणापूर्ण व्यंजना निराला ने अपने गीतों में की है । निराला के जीवन के अभावों और पत्नी के बिछुड जाने के दुख ने उनके व्यक्तित्व को इतना झकझोरा है प्रेम के झूले में झूलने के दिनों में कि उन्हें विरह के अंगार को अपने हृदय में समा लेने का समय आ गया, फल स्वरूप इनके विरह गीतों में एक विषाद राग को सर्वत्र आलाप करते हुए देखते हैं । दर्शन और आध्यात्मचिंतन में कवि प्रवृत्त रह जाने के कारण इनके विरह गीतों में आध्यात्मिक पुट को देखा जा सकता है । डॉ.भगीरथमिश्रजी का कहना है कि 'निराला जी का विरह वर्णन बड़ा ही मार्मिक और उच्च कोटी का है । कहीं पर गंभीर करुणा की गहन निराशा है, असफलता, हार और सर्वस्व लुट जाने के दुख की कराह है तो कहीं पर गंभीर करुणा के साथ उदात्तता है । लगता है उनकी दार्शनिक प्रज्ञा इन सब भावों से ऊपर उठकर बराबर उनका मार्गदर्शन करती रही ।' इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रेम और आध्यात्म का मणि-कांचन संयोग निराला के काव्य में हुआ है ।

## 24.4. निराला के काव्य में व्यंग्य

व्यंग्य निराला के काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों में से एक है । छायावादी काव्यधारा के कवियों में से निराला ही एक मात्र हस्ताक्षर हैं जिनकी कविताएँ समाज के सर्वहारा वर्ग के दुख दर्द के प्रति प्रतिबद्ध हैं । निराला ने व्यंग्य का प्रयोग अत्यंत प्रभावकारी ढंग से सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन की विसंगतियों को उभारकर रखने के लिया किया है । व्यंग्य निराला की उत्तर कालीन रचनाओं का प्रधान स्वर बना है । इसके लिए एक ओर तत्कालीन पूँजीवादी संस्कृति की भयंकर यथार्थताएँ उत्तरदायी हैं तो दूसरी ओर अपने खुद के भोगे हुए कष्ट जिम्मेदार हैं । निराला ने अपने व्यंग्यों के द्वारा अपने समाज के बुर्ज्वा वर्ग पर कठोर प्रहार किया है और इनके शोषण के शिकार बने हुए अभिशप्त,

दीन एवं शोषित वर्ग के प्रति सहज मानवीय सहानुभूति प्रकट की है । निराला की इन व्यंग्य रचनाओं को हिन्दी की प्रगतिशील चिंतनधारा की युग प्रवर्तनीय रचनाएँ मान सकते हैं । निराला के काव्य में प्राप्त व्यंग्य का विश्लेषण करते हुए डॉ.भगीरथ मिश्र लिखते हैं - "निरालाजी का व्यैग्य कभी किसी व्यक्ति को लेकर न उतरा, न उसका स्वरूप कभी संकुचित, स्वार्थी एवं ध्वंसात्मक रहा । सामाजिक जीवन की विभीषिकाओं को निरालाजी ने खुली आँखों से देखा, दिल से अनुभव किया । जन सामान्य के गालों पर लरजते आँसुओं में उन्होंने उनके दुख एवं पीड़ा की कहानी देखी और सुनी । यही पीड़ा और दुख उनके काव्य में व्यंग्य के रूप में मुखर हुए । इसलिए जहाँ उनका छायावादी काव्य हिमालय के समान है, वहाँ उनका परवर्ती जनवादी काव्य द्रवीभूत होकर निकली गंगा-यमुना की धाराओं की भाँति है, जो पद दलित मानव को स्पर्श करता है और उनके सुखःदुखों के कलरव की अनुगूँज से मुखरित है और इसी कारण मैं इस काव्य को रचनात्मक समझता हूँ ।'

'कुकुरमत्ता' के पूर्व के काव्य संकलनों में संग्रहीत कविताओं में भी व्यंग्य आया है, तथापि 'कुकुरमत्ता' के प्रकाशन के साथ निराला की दृष्टि अधिक सामाजिक हुई ! उनका व्यंग्य अधिक प्रखर बना, स्वमिल संसार की अपेक्षा यथार्थ संसार, अतीत की अपेक्षा वर्तमान उनकी रचनात्मकता का आधार बना । कुकुरमत्ता, नए पत्ते, बेला संग्रहों की रचनाओं में व्यंग्य अपनी चरम-सीमा पर अभिव्यक्त हुआ है ।

'कुकुरमत्ता' में हमारे समाज की महाजनी सभ्यता पर कठोर प्रहार है, पूँजीवादी संस्कृति के फलस्वरूप सहज रूप में समाज का दो वर्गों में बँटवारा हुआ अमीर और गरीब, शोषक और शोषित । फलस्वरूप असमानताएँ बढ़ती गई .। बलिष्ठ वर्ग दुर्बल वर्ग का खून और पसीना पीकर इस प्रकार मोटा होता गया कि दुर्बल वर्ग की मोटी हाय की परवाह किसी को न रही । निराला इस वर्ग का

स्वर बने । 'कुकुरमत्ता' कविता हमारे पूरे समाज पर कसा व्यंग्य है -

**अबे, सुन बे, गुलाब,**
**भूल मत जो पाई खुराबू रंगोआब**
**खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,**
**डाल पर इतराता है कैपिटलिस्ट**

'कुकुरमत्ता' की सार्थक प्रासंगिकता का रेखांकन करते हुए डॉ.प्रेम शंकर लिखते हैं कि 'कुकुरमत्ता' अपने समय की सही जमीन पर रचा गया है । देश में सामंतवाद के साथ नये पूँजीवाद का गठ बंधन और किसान, मजदूर तथा गरीब जनता पर अत्याचार, बढ़ता हुआ वर्ग भेद, शोषण और अन्याय ! ऐसे में निराला ने कुकुरमत्ता जैसे सर्वहारा को नेतृत्व दिया ।'

निराला शीषित वर्ग के 'पक्षधर' हैं । इनका शोषित वर्ग विशाल भी है । इस वर्ग की अनंत अश्रुधारा को देखकर निराला अत्यंत क्षुब्ध और संवेदनशील हुए हैं । प्रगतिवादी काव्यधारा की कोटी में आनेवाली इन रचनाओं में अपने वर्तमान की कठोर यथार्थताओं को निराला प्रस्तुत किया है । भारत के गरिमामय अतीत का गौरवगान जहाँ इनकी रचनाओं में व्यापकरूप से आया है वहीं पर वर्तमान की गरीबी, रूढ़िग्रस्त मान्यताओं से झर्झरित समाज की विद्रूपों और मानवता के प्रति हो रहे घोर अपमान का चित्रण भी इनके कृतित्व का अभिन्न हिस्सा बन गया है । विधवा, वह तोडती पत्थर, भिक्षुक, दान, सरोजस्मृति जैसी कविताओं में निराला ने अपने युग की विसंगतियों को उभारने का प्रयास किया है । उदाहरण के लिए निम्नांकित काव्यांशों को देख सकते हैं -

**'वह क्रूर-काल-तांडव की स्मृति रेखा सी**
**वह टूटे तरु से छुटी लता सी दीन,**
**दलित भारत की विधवा है (विधवा)**

'विधवा' कविता में निराला ने भारतीय परिवारों में विधवाओं

की स्थिति का अत्यंत करुणामय चित्र प्रस्तुत किया है । विधवाओं की करुण कहानी का इतना मर्मांतक वर्णन हमें अन्यत्र शायद ही मिलता हो ।

**वह तोड़ती पत्थर**
**देखा उसे मैं ने इलाहाबाद के पथ पर**
**वह तोड़ती पत्थर ।**
**कोई न छायादार**
**पेड वह जिसके तले बै हुठीईस्वीकार,**
**श्याम तन, भर बंधा यौवन**
**नत नयन, प्रिय कर्म रत मन ।**
**गुरु हथौड़ा हाथ,**
**करती बार बार प्रहार**
**सामने तरु मालिका अट्टालिका, प्राकार**

**(तोड़ती पत्थर)**

निराला अपनी प्रगतिशील कविताओं में 'वर्ग बोध' को बराबर रेखांकित करते हैं जिसके कारण हमारे समाज में मनुष्य-मनुष्य के बीच खाइयाँ निर्मित हुई हैं । प्रस्तुत कविता में पत्थर तोड़नेवाली युवती की यातनाओं और कर्म के प्रति उनकी निष्ठा पर जोर देते हैं साथ हीं उसकी दृष्टि को 'अट्टालिकाओं' और 'भवनों' की ओर केन्द्रीकृत रखा है जहाँ के लोगों को इस निरीह वर्ग के प्रति कोई सहानुभूति नहीं है । यह छोटी सी कविता दो वर्ग के दुख-सुख का बड़े मार्मिक ढंग से अनावरण करती है ।

'दान' और 'भिक्षुक' कविताओं में निराला ने दलित, भूखे और गरीब लोगों के नग्नचित्रों का अंकन किया है । उपरोक्त दोनों कविताओं का भिखारी सजग पाठकों एवं मानवता के मर्म को छू लेते हैं । 'दान' कविता की ये पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

**एक ओर पथ के कृष्ण काय**
**कंकाल शेष नर मृत्यु प्राय**

**बैठा सशरीर दैन्य दुर्बल**
**भिक्षा को उठी दृष्टि निश्चल ।**

पूँजीवादी और पुरोहित वर्ग के अमानवीय व्यवहारों का भी निराला ने इन कविताओं में समांतर रूप से उद्‌घाटन किया है । यह वर्ग इन्हें 'मनुष्य' स्वीकारने को भी तैयार नहीं है । बंदरों के हाथो मिठाई देने को तैयार ये लोग सामने भूख से तड़प रहे मनुष्यों की ओर दया-दृष्टि से देखने को तैयार नहीं हैं । अतः निराला इस वर्ग का बड़ा व्यंग्य किया है ।

निराला किसान आंदोलनों से भी जुड़े रहे, उनके सुखदुख के साथी रहे । परिणाम स्वरूप इनके अनेक गीतों में कृषकों के दयनीय चित्र उभर आए हैं । ग्रामीण भारत के संकष्टों का वर्णन निराला के गीतों और उपन्यासों में विस्तार से आया है ।

निराला जनवादी लेखक हैं, दुखी वर्ग के प्रति प्रतिबद्ध हैं, इनका उद्धार देखना चाहते हैं । अपनी सृजनधर्मिता के अभिन्न अंग के रूप में लोक जीवन की तमाम विसंगतियों को स्वीकार कर के उनका पर्दापाश और व्यंग्य किया है । इतना ही नहीं सत्य कहे जानेवाले नागरिक समाज एवं उच्च वर्ग के लोगों की शोषक प्रवृत्ति को भी नजरंदाज न करके उनके मुखौटों को उघाडने में भी निराला पीछे नहीं हैं । 'सरोजस्मृति' के अनेक छंदों और अन्यान्य गीतों में इसे देखा जा सकता है । संक्षेप में कहा सकते हैं कि व्यंग्य निराला के काव्य का प्रधान स्वर रहा है ।

## 24.5. निराला के काव्य में राष्ट्रीय चेतना

छायावदी काव्यधारा का प्रधान स्वर राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना रहा है । जब देश पराधीनता की ज़जीरों में था तब छायावादी कवि अपनी सृजनधर्मिता के उत्तुंग शिखर पर थे । प्रकृति और दर्शन के प्रति इनका झुकाव यद्यपि अधिक था तथापि राष्ट्र के तत्कालीन वातावरण से ये कटे हुए नहीं थे । राष्ट्र को

इन्होंने सर्वाधिक महत्व दिया, उसे देवी के रूप में एवं माता के रूप में देखकर उसकी पूजा की । इनकी राष्ट्रीय चेतना प्रश्नातीत रही है, अपने समकालीन कवियों की भाँति निराला ने भी युग बोध को अत्यंत प्रखरता से वाणी दी । विवेकानंद की उद्‌बोधक वाणी से इनका देशप्रेम पल्लवित हुआ था । डॉ.भगीरथ मिश्र के शब्दों में निरालाजी की राष्ट्रीय चेतना इस संदर्भ में बहुमुखी है, वह प्रचारात्मक नहीं वरन् रचनात्मक एवं सांस्कृतिक है । उनकी राष्ट्रीयता के पीछे उनका आध्यात्मिक चिंतन एवं विवेकानन्द आदि संतों के विचारों का प्रभाव परिलक्षित है । निरालाजी विवेकानंद से अत्यधिक प्रभावित थे और विवेकानंद ने इस देश को सुन्दर से सुन्दरतम बनाने में बहुत बड़ा कार्य किया । देश ही उनका सर्वस्व था । उनकी ही भाँति निराला भी इस देश के बारे में सदा सोचते रहते थे । निराला की राष्ट्रीयता भारत की इस मिट्‌ठी में उगती, पनपती है, परंतु इसमें प्रफुल्लित एवं पल्लवित होती हुई बहुत दूर जाकर वह समस्त मानवता को अपने में समेट लेती है ।'

निराला के राष्ट्र-गीतों में अतीत का गौरव गान, वर्तमान के प्रति क्षोभ, भविष्य के प्रति आशावादी दृष्टिपात और मानवता का स्तुतिगान है । भारतीय अस्मिता की तलाश इनके देशप्रेम से युक्त गीतों की धुरी है । वर्तमान का पुनर्निमाण, इनका लक्ष्य रहा है । निराला ने दिल्ली, यमुना के प्रति, भारती, जय विजय करे, जागो फिर एक बार , महाराज शिवाजी का पत्र, जैसे अनेक गीतों में बड़े ओजस्वी स्वर और शैली में जागरण गीत गाए हैं -

**बता, कहाँ अब वह वंशीवट ?**
**कहाँ गए नटनागर श्याम ?**
**चह चरणों का व्याकुल पनघट ?**
**कहा आज वह वृन्दाधाम ? (यमुना के प्रति)**
**क्या यह वही देश है**
**भीमार्जुन आदि का कीर्तिक्षेत्र**
**चिर कुमार भीष्म की पताका ब्रह्मचर्य दीप्त**
**उडती है आज भी जहाँ के वायुमंडल में**

**उज्वल, अधीर और चिरनवीन (दिल्ली)**
**जागो फिर एक बार !**
**पशु नहीं, वीर तुम,**
**समर-शूर, क्रूर नहीं,**
**काल चक्र में ही दबे**
**आज तुम राज कुंवर ! समर सरताज !**
**(जागो फिर एक बार)**

इस प्रकार उन्होंने अपने उद्बोधन गीतों में राष्ट्रवासियों की नस-नस में राष्ट्र-चेतना का संचार कराया है.

निराला ने 'भारति, जय, विजय कर' कविता में माँ भारती का मनोज्ञ स्तुतिगान प्रस्तुत किया है, उसे माता का रूप देखकर यहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य से उसको विभूषित किया है -

**'भारति, जय, विजय करे !**
**नरक, शस्य कमल ... !**
**मुकुट शुभ्र हिम तुषार,**
**प्राण प्रणव ओंकार,**
**ध्वनित दिशाएँ उदार,**
**शतमुख-शतरव-मुखरे ।**

निराला की राष्ट्रीयता की चरम परिणति विश्वमाता की परिकल्पना में है । सारा जगत एक माला है जिसमें राष्ट्ररूपी फूल गूँथे हुए हैं । निराला कहते हैं -

**जग का एक देखा तार**
**कंठ अगणित, देह सप्तक**
**मधुर स्वर-झंकार !**
**बहु सुमन, बहुरंग निर्मित एक सुन्दर हार ;**
**एक ही कर से गुँथा उर एक शोभा भार ।**
**गंध शत अरविंद नंदन विश्व वंदन-सार**
**अखिल-उर रंजननिरंजन एक अनिल उदार ।**

निराला की राष्ट्रीय भावना में संकुचित धर्म, वर्ण और जाति का कोई महत्व नहीं है । मात्र मनुष्य वर्ग का हित चिंतन इनके काव्य का मूल लक्ष्य रहा है । देश एवं वाद-विवादों से परे जाकर एक ऐसी भावभूमि पर अपना मानवतावाद स्थापित करते हैं जहाँ मनुष्यत्व की गरिमा मात्र सम्मानित हो सके । कवि का कहना है -

**सारी संपत्ति देश की हो**
**सारी संपत्ति देश की बने**
**जनता जातीय देश की हो**
**x x x x**
**नहीं आज का यह हिन्दू, आज का मुसलमान**
**आज का ईसाई, सिक्ख, आज का यह मनोभाव**
**आज की यह रूपरेखा, नहीं यह कल्पना**
**सत्य है मनुष्य मनुष्यत्व के लिए ।**

इस प्रकार हम देखते हैं कि निराला के काव्य में राष्ट्रीय चेतना की भावभूमि अत्यंत व्यापक है, यहाँ संकीर्णता के लिए कोई गुंजाइश नहीं है । अपने देश एवं देशवासियों के प्रति अनन्य प्रेम, निष्ठा एवं अभिमान प्रदर्शित करते हुए निराला ने 'विश्वराज्य' की परिकल्पना की है । इनका मानवतावाद संपूर्ण 'वसुधा' को एक कुटुम्ब के रूप में स्वीकार करता है, सबका कल्याण चाहता है और सबका शुभ चाहता है ।

## 24.6. बोध प्रश्न

1. निराला के काव्य की प्रवृत्तियों के बारे में समीक्षा कीजिए ।
2. सिद्ध कीजिए कि 'निराला की काव्य में राष्ट्रीय-चेतना, के साथ-साथ व्यंग्य की प्रधानता भी है - इस मत की विश्लेषण कीजिए ।

## NOTES

## NOTES

## इकाई पच्चीस : निराला - तुलसीदास

### इकाई की रूपरेखा

25.0. उद्देश्य

25.1. प्रस्तावना

25.2. निराला के काव्य में प्रकृति

25.3. निराला और तुलसीदास

25.4. तुलसीदास : एक विवेचन

25.5. भारत : अतीत की गरिमा, वर्तमान की दुर्दशा

25.6. तुलसीदास

25.7. राजापुर और तुलसीदास

25.8. प्रकृति के द्वारा दायित्व का बोध

25.9. बोध प्रश्न

## 25.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने निराला के काव्य की प्रवृत्तियाँ अध्ययन किया और साथ में उनकी काव्य में प्रेम और श्रृंगार के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर लीं । इसके अलावा उनकी काव्यों में व्यंग्य के बारे में अध्ययन किया ।

## 25.1. प्रस्तावना

इस इकाई में निराला की काव्य में 'प्रकृति और उसकी प्रधानता के बारे में अध्ययन करने वाले हैं । निराला और भक्तिकाल के भक्त शिरोमणि तुलसीदास के बारे में अध्ययन करनेवाले है । खंडकाव्य तुलसीदास की विशेषता भारत की अतीत के प्रति गौरव तथा वर्तमान की दुर्दशा तथा भविष्य के बारे में चिंता के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे ।

## 25.2. निराला के काव्य की प्रकृति

प्रकृति मानव की चिरसंगिनी है जिसकी गोद में मानव हँसना सीखता है, जीवन के उल्लास की पहली झलक पाता है । रीतिकालीन इतिवृत्तात्मक शैली के प्रति छायावादी काव्यधारा ने सूक्ष्मता का विद्रोह किया, फलस्वरूप इस काव्यधारा में प्रकृति का सोल्लास वर्णन है । ऋतुओं का चक्र जैसे जैसे घूमता जाता है वैसे वैसे उनके सौंदर्य में होनेवाले परिवर्तनों के सहस्रमुखों के दर्शन इन कवियों ने कराए हैं । प्रकृति के मृदुल रूपों के साथ उसके रौद्ररूपों का चित्रांकन लगभग सभी छायावादी कवियों ने किया है । प्रकृति इनके लिए मात्र काव्य का उपादान नहीं है अपितु मानव जगत के साथ निरंतर संवेदनशील रहनेवाली जीवंत चेतना है, माँ है, सखी है । जैसे अन्य छायावादी कवियों में, वैसे निराला के काव्य में भी प्रकृति अविभाज्य अंग रही है । मानव एवं राष्ट्रजीवन के विभिन्न प्रतीकार्यो में प्रकृति का चित्रण निराला ने किया है । लौकिक जगत के प्राकृतिक सौंदर्य में अलौकिक जगत

की छवि को देखा है जोकि उनके अद्वैत दर्शन का आधार बिन्दु है । वस्तु जगत की लालिमा में परोक्ष जगत की लालिमा की झलक पाने की प्रवृत्ति निराला में है । यहाँ उनकी रहस्यानुभूति का आरंभ होता है और इसका विकास यहाँ तक हुआ है कि प्रकृति के रूप में उस परमात्मा के कोमल स्निग्ध रूप को ही नहीं अपितु उसके तांडवनृत्य को भी देखते हैं । इस प्रकार निराला के आध्यात्म चिंतन और लौकिक संघर्ष के आलंबन के रूप में प्रकृति क्रियाशील रही है ।

निराला का प्रकृति-संसार बड़ा ही निराला है । प्राकृतिक लोक के सैकड़ों बिंबों के सहारे ही कवि ने अपने समय और समाज की विसंगतियों को दर्शाने का जैसा प्रयास किया है, वैसा ही प्रयास मानव की दुःख और सुखात्मक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में भी किया है । प्रकृति लोक के ये बिंब सर्वथा ताज़े हैं, 'मैले हुए' पुराने बिंबों की लीक से हटकर निराला ने अपनी प्रतिभा से जो बिंब दिए हैं, इन बिंबों से प्रकृति के जो मनोरम चित्र उभर आए हैं वे निश्चय ही अनन्य हैं । प्रकृति के जो मानवीकरण करने में और प्रकृति में नवरस की अभव्यक्ति दिखा पाने में निराला ने विशेष रुचि दिखाई है । आधुनिक हिन्दी को सर्वथा अनूठे प्रकृतिपरक गीतों को देकर इस क्षेत्र को हरा भरा रखने में निराला का विशिष्ट योगदान है । निराला के प्रकृति गीतों में अभिव्यक्त सौंदर्य चेतना के दो-तीन उदाहरण दिए जा रहे हैं -

**'कौन तुम शुभ्र-किरण-वसना ?**
**सीख केवल हँसना-केवल हँसना**
**शुभ्र-किरण-वसना**
**x x x**
**दिवसावसान का समय**
**मेघमय आसमान से उतर रही है**
**वह संध्या-सुन्दरी परी सी**
**धीरे-धीरे-धीरे**
**तिमिरांचल में चंचलता का नहीं कहीं आभास,**

मधुर मधुर हैं दोनों उसके अधर -
किन्तु गंभीर-नहीं है उनमें हास-विलास ।
- (संध्या सुन्दरी)

निराला के सैकड़ों गीतों में प्रकृति का नवोनवोन्मेश शालिनी रूप हम देखते हैं । बदलते ऋतुमानों के साथ बदलती प्रकृति के कोमल और रुद्ररूपों का चित्रण देख सकते हैं । जुही की कली, शेफालिका, यमुना के प्रति, नर्गीस, वन बेला, संध्या सुन्दरी, बादल राग आदि निराला के कुछ विशिष्ट प्रकृति गीत हैं । निराला जी छायावादी काव्य-धारा के एक सुदृढ़ आधार स्तम्भ है । छायावादी भाव-बोध में और जो हो, सो हो, हमारे विचार में उसके भाव-बोध की अभिव्यक्ति का सबल माध्यम प्रकृति ही रही है । उसके माध्यम के कारण छायावादी काव्यधारा में सौन्दर्य या 'सुन्दरम्' के आग्रह की रक्षा हो सकी है । वह 'सत्य' एवं 'शिवम्' की भी विधायक है । काव्य में 'सुन्दरम्' की अपनी महत्ता एवं सत्ता अनिवार्यतः रहती ही है और हमारे विचार में रहनी ही चाहिये । नहीं तो वह प्रत्यक्ष जीवन की विभीषिकाओं का ढूह मात्र बन कर रह जायगा । यह 'सुन्दर' तत्व वस्तु एवं व्यक्ति दोनों में रहता है । निराला जी ने 'सुन्दर' तत्व की खोज वास्तव में आत्मा एवं अन्तराल में की है । इसके प्रमाण स्वरूप 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' जैसे क़ाव्यों को प्रस्तुत किया जा सकता है । निराला जी इसी 'सुन्दर' को अत्यधिक प्रभावी भी मानते हैं । उन्होंने आंतरिक-सौन्दर्य की छाया का प्रतिबिम्ब ही प्रकृति में भी निहारने का प्रयत्न किया है । अतः उनका प्रकृति-चित्रण आत्मिक तत्व एवं सौन्दर्य से अभिन्न है । वह प्रकृति के व्यक्त किंतु सूक्ष्म सौन्दर्य पर ही अधिक विश्वास करते हैं । इसी कारण उनके प्रकृति-चित्रण में अंतःबाह्य का एक सुन्दर समन्वय मिलता है । उनकी 'जुही की कली' सन्ध्या-सुन्दरी' जैसी प्रकृति परक कविताएँ भी मात्र बाह्य-सौन्दर्य की विधायिका नहीं, बल्कि वहाँ एक सूक्ष्य आत्मिक सौन्दर्य के भी दर्शन होते हैं । 'सन्ध्या-सुन्दरी' का एक उदाहरण -

''नहीं बजती उसके हाथों में कोई वीणा,
नहीं होता कोई अनुराग-राग-आलाप,
नूपुरों में भी रुनझुन-रुनझुन नहीं,
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द सा 'चुप, चुप, चुप',
है गूँज रहा सब कहीं ।''

इस पद्य में सन्ध्या का सन्नाटा तो है ही सही, आत्मा का मौन निमग्नता का भाव भी विद्यमान है । इसी प्रकार निराला जी ने 'तुलसीदास' काव्य के प्रकृति-चित्रण में भी आन्तरिक वातावरण की सजीवता को ही प्रश्रय दिया है । तुलसीदास जी जब अपनी पत्नी के पीछे ससुराल जा रहे हैं, तो उस समय का प्राकृतिक दृश्य -

''मग में पिक-कुहरित डाल-डाल,
है हरित विटप सब सुमन-माल,
हिलतीं लतिकाएँ ताल-ताल पर सस्मित ;
पड़ता उन पर ज्योतिः प्रपात,
हैं चमक रहे सब कनक-गात ;
बहती मधु-धीर समीर ज्ञात, आलिंगित ।''

उपरोक्त पंक्तियों में निराला के काव्य में पाई जानेवाली कुछ प्रमुख प्रवृत्तियों की ओर संकेत करने का प्रयास किया गया है । निराला इस शताब्दी के श्रेष्ठ गीतकार, छायावादी, प्रगतिवादी कवि उच्चकोटी के दार्शनिक एवं चिंतक रहे हैं और साथ ही महान मानवतावादी हैं । इनके कृतित्व का ओजस्वी स्वर मनुष्य मनुष्य के बीच का अंतर पाटने, मनुष्य के भीतर के देवता को पहचानने, मनुष्य की चारों ओर के विद्रूपों को मिटाने में लगा हुआ है । निराला एक ऐसे समाज की परिकल्पना करते हैं जहाँ का मानव वर्णहीन और जातिहीन हो और जहाँ सबको जीने का समान अवसर प्राप्त हो न किसी को कम, न किसी को ज्यादा । इस समाज में वैज्ञानिक दृष्टि से विकसित बुद्धि हो, अंधविश्वासों से मुक्त मस्तिष्क हो । यह उनका आदर्श समाज है तो दूसरी ओर इस

बात से भी वे खूब परिचित हैं कि हमारी सामाजिक परिस्थितियाँ एवं मान्यताएँ उतनी आसानी से परिवर्तित भी नहीं होगी । इन सब के साक्षी और भुक्त भोगी थे निराला । इसका मतलब यह भी नहीं है कि वे सामाजिक धरातल पर बिलकुल नेराशावादी थे यद्यपि व्यक्तिगत धरातल पर विराग की ओर उनकी दृष्टि सरक गई थी । सामाजिक जड़ता का नाश करने और राष्ट्रीय जीवन में नई चेतना लाने के लिए निराला ने क्रांति का पांचजन्य ब गाया' है, विद्रोह की शंखध्वनि से परिवर्तन लाने का आग्रह किया है । उदाहरण के लिए इन पंक्तियों को देख सकते हैं -

**नाचो हे रुद्रताल**
**ओचो जग ऋतु-अराल**
**झरे जीव जीर्ण-शीर्ण**
**उद्‌भव हो नव प्रकीर्ण**
**करने को पुनः तीर्ण**
**हो गहरे अंतराल**
**x x x x**
**जल्द-जल्द पैर बढ़ाओ, आओ, आओ !**
**आज अमीरों की हवेली**
**किसानों की होगी पाठशाला,**
**धोबी, पासी, चमार, तेली**
**खोलेंगे अंधेरे का ताला ।**
**x x x x**
**दूर हो अभिमान, संशय**
**वर्ण-आश्रम-गत महा भय**
**जाति जीवन हो निरामय**
**वह सदाशयता प्रखर हो ।**

इस प्रकार हम देखते हैं कि निराला अपने समय के साथ सदा जुड़े हुए थे और अपने समय के ज्योतिपुंज और स्फुलिंग थे ।

## 25.3. निराला और तुलसीदास

गोस्वामी तुलसीदास मध्ययुग के महान भक्त, चिंतक दार्शनिक और कवि थे तो निराला आधुनिक युग के श्रेष्ठ भक्त, चिंतक, दार्शनिक और कवि हैं । तुलसी और निराला के जीवन में अद्‌भुत समांतर रेखाएँ दिखाई पड़ती हैं जिस ओर निर्देश करते हुए डॉ.भगीरथ मिश्रजी लिखते हैं - 'निराला में भी कई प्रवृत्तियाँ तुलसीदास जी की मिलती हैं । वे गोस्वामीजी के समान ही आध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे और आधुनिक युग का ध्यान रखते हुए उन्हें भक्त भी कहा जा सकता है । उनकी अनेक कृतियाँ वेदना या मंगलाचरण से प्रारंभ होती है । तुलसी के समान ही निराला जी को अपने देश और संस्कृति का अभिमान था और उससे संबंधित अनेक रचनाएँ बड़ी महत्वपूर्ण हैं । तुलसी के समान ही निराला जी भी स्वाभिमानी और प्रेमी मानव थे । निराला ने कभी किसी के आगे हाथ नहीं पसारा और न कभी अकिंचनता को दैन्य के रूप में देखा । वे स्वाभिमान के साथ जिये और स्वाभिमान से मरे । अपनी पत्नी के प्रति निराला का प्रेम भी अटूट था और जिस प्रकार तुलसीदास को पत्नी के उपदेश ने रामाभिमुख किया उसी प्रकार निराला को उनकी पत्नी मनोहरादेवी ने हिन्दी कविता और देश प्रेम की ओर मोडा । तुलसी का महत्व समझकर ही निराला ने 'तुलसीदास' काव्य की रचना की, जो उनकी एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक देन है ।

'तुलसी के समान निराला भी रामभक्त थे, यद्यपि वे दार्शनिक दृष्टि से अद्वैतवादी थे । गोस्वामी तुलसीदास के समान ही निरालाजी का भी काव्य में सामाजिक दृष्टिकोण था तथा भारतीय संस्कृति के उत्कष्ट प्रेमी होते हुए भी वे मूलतः मानवतावादी थे । जैसे तुलसी ने लिखा 'सीय राममय सब जग जानी, करौ प्रणाम जोरि जुग पानि' और मानव योनि को सर्वश्रेष्ठ माना वैसे ही निराला ने भी मानव-मानव की भिन्नता का तिरस्कार करके समता का प्रतिपादन किया । वे कहते हैं -

मानव मानव से नहीं भिन्न
निश्चय, हो श्वेत कृष्ण अथवा
वह नहीं क्लिन्न
भेद कर पंक
निकलता कमल जो मानवता का
वह निष्कलंक
हो कोई सर ।

समाज के दलितों और पीडितों के प्रति उनके हृदय में सदैव करुणा की धारा बहती थी और अपना सब कुछ स्वाहा करके भी वे दुखियों का दुःख दूर करना चाहते थे ।

तुलसी के समान निराला को भी अपने भौतिक जीवन और परिवार के प्रसंग में बड़ा दुख देखना पड़ा था । बड़ी विषय क्रूर परिस्थितियों के बीच उन्होंने जीवन यापन किया और कबीर की उक्ति -

चाह गई चिंता मिटी,
मनुवाँ बेपरवाह ।
जा को कछु न चाहिये,
सोई सांहसांह ।।

के अनुसार निरालाजी भी शाहंशाह ही थे । उनके जीवन का एक क्षण भी वैयक्तिक स्वार्थ-पूर्ति के लिए नहीं बीता, वरन् जनहित के लिए ही सब कुछ समर्पित रहा । तुलसी ने जैसे कभी-कभी खीझकर कलियुग की कुचालों पर लक्ष्य करके अनाचारियों को खरी-खोटी सुनायी थी, वैसे ही निराला ने भी स्वार्थियों और अनाचारियों को खूब खरी खोटी सुनायी ।

डॉ.रामरतन भटनागर ने भी तुलसीदास और निराला के जीवन में ऐसे समांतर बिंदु अनेक देखे हैं - 'तुलसी निराला के सब से प्रिय कवि हैं । उन्होंने एक स्थान पर अपने को तुलसीदास के सीधे बाद और साथ रख कर भी देखा है और 'तुलसीदास' रचना

में वह स्वयं तुलसीदास के व्यक्तित्व और नारी के भीतर से उन्हीं भाव मुक्ति का अनुभव कर रहे हैं । तुलसीदास के पीछे रत्नावली है तो निराला के पीछे भी मनोंहरा है जिसका श्रृंगार के प्रसंग में उन्होंने बार-बार उल्लेख किया है । आलंबन भिन्न हो सकते हैं, दृष्टि एक ही है । तुलसी का अद्वैत दर्शन, उनकी भावभूमि, काव्यकला, विशेषतः भाषा की प्रौढ़ता और अनाविल सौंदर्यदृष्टि इन सबके प्रति निराला को असीम श्रद्धा है । यही नहीं इन सब क्षेत्रों में उन्हें सीधा तुलसीदास का उत्तराधिकार मिला है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि तुलसी ने अपने समय में जिन मूल्यों और सांस्कृतिक गरिमा की पहचान के लिए संघर्ष किया, उसी प्रकार निराला ने अपने समय की अंग्रजों की साम्राज्यवादी ताकत, पूँजीवादी शक्ति और सामाजिक जीवन में व्याप्त अभिशापों के खिलाफ संघर्ष का बीड़ा उठाया । तुलसी ने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में चित्रित करके युग के सामने एक आदर्श स्थापित किया है तो निराला ने तुलसी को क्रांतिदर्शी मानवतावादी, सांस्कृतिक जीवन के पुरोधा के रूप में चित्रित किया है । व्यक्तिजीवन और राष्ट्रजीवन के प्रति तुलसीदास की प्रतिबद्धता निराला की प्रस्तुत रचना 'तुलसीदास' की प्रेरणा भूमि रही है ।

## 25.4. तुलसीदास : एक विवेचन

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला के काव्य-ग्रंथों में 'तुलसीदास' खंडकाव्य का अपना विशिष्ट महत्व है जो कि भारतीय अस्मिता और संस्कृति का पुनर गायन करनेवाला, मध्ययुगीन मुगल आक्रमणों से झर्झरित जनमानस को उसकी सही परंवरा की पहचान करानेवाला काव्य है । निराला असाधारण प्रतिभा के धनी थे किन्तु अपने यातन मय जीवन के दल-दल में ऐसे फँसे हुए थे कि वहाँ से बाहर आकर सृजन कर्म में अपने को पूर्णरूपेण समर्पित कर लेने का अवसर ही उन्हें नहीं मिला । शायद इसलिए ही निराला की प्रतिभा महाकाव्य के रूप में प्रस्फुटित हो नहीं पाई ।

इनके सैकड़ों फुटकल गीतों के बीच एक ओर राम की शक्तिपूजा, सरोजस्मृति जैसी लंबी कविताएँ हैं तो दूसरी ओर 'तुलसीदास' जैसा लघु खंड काव्य है । कलेवर की दृष्टि से इनका आकार छोटा है मगर यहाँ की वस्तु में आलोचकों ने महाकाव्य की संभावनाएँ देखी हैं और इन्हें महाकाव्यात्मक रचनाएँ अथवा 'एपिकल' कह कर संबोधित किया है । उसी कारण उन्होंने अत्यंत संक्षिप्त रूप में, छायावादी परिवेश की सांकेतिक प्रणाली में तुलसीदास के समूचे वृत एवं युग-आयाम को भी चित्रित कर दिया है । कथानक से संबंधित तुलसीदास के जीवन-वृत्त के परिचायक ६ पद्य हैं - 11, 12 और 13 वाँ । ग्यारहवें पद्य में कवि ने तुलसीदास की जन्मभूमि 'राजापुर' की अवस्थित एवं समृद्धि का सांकेतिक सबल चित्रण किया है । बारहवें पद्य में तुलसीदास के वंश-परिचय के साथ-साथ शिक्षा-अध्ययन की कथा कहते हुए कवि ने उसी सांकेतिक प्रणाली में कहा है -

**''युवकों में प्रमुख रत्न-चेतन**
**समधीत शास्त्र-काव्यालोचन**
**जो, तुलसीदास, वही ब्राह्मण-कुल-दीपक**
**आयत-दृग, पुष्प-देह गत-भय**
**अपने प्रकाश में निःसंशय**
**प्रतिभा का मन्दस्मित परिचय, संस्मारण ।''**

इस परिचय के बाद कवि ने सांकेतिक रूप से ही तुलसीदास के विवाह, उसकी विद्वत्ता का प्रभाव और लोक-प्रियता आदि का वर्णन भी 13वें पद्य में करते हुए लिखा है -

**''नीली उस यमुना के तट पर**
**राजापुर का नागरिक मुखर**
**प्रियजन विद्याध्ययननांतर है संस्थित ;**
**जल की शोभा का-सा उत्पल,**
**सौरभोत्कलित अम्बर-तल, स्थल-स्थल, दिक-दिक ।''**

इस प्रकार कहा जा सकता है निराला जी ने मुख्य कथा-वस्तु से संबंधित कथा-नायक तुलसीदास का समूचा ही जीवन-वृत्त यहाँ बड़ी कुशलता से अंतःस्यूत कर दिया है । क्योंकि इसके बाद तुलसीदास के जीवन-वृत्त यहाँ बड़ी कुशलता से अंतःस्यूत कर दिया है । क्योंकि इसके बाद तुलसीदास के जीवन-वृत्त के संबंध में कहना कुछ शेष नहीं रह जाता । उसकी सर्जनाएँ बाकी सब कुछ तो स्वतः ही कह देती है । 'तुलसीदास' की सर्जना का प्रत्यक्ष या स्थूल कथा-वृत्त या कथा-वस्तु मात्र यही है ।

## 25.5. भारत : अतीत की गरिमा, वर्तमान की दुर्दशा

निराला का 'तुलसीदास' चरित काव्य नहीं है अपितु तुलसीदास के माध्यम से भारतीय इतिहास एवं संस्कृति की जड़ों का अनुसंधान करनेवाला एक सांस्कृतिक काव्य है । भावुकता से यथार्थ की ओर तुलसीदास का चंक्रमण है जहाँ अपनी जातीय अस्मिता की तलाश करने का सफल प्रयास किया गया है । निराला 'तुलसीदास' में पौराणिक संदर्भ से इतिहास की ओर मुड गए हैं । वैसे, अपनी अन्य लंबी कविताओं - उदाहरण शिवाजी का पत्र, जागो फिर एक बार में उन्होंने इतिहास पर दृष्टिपात किया था, किंतु प्रस्तुत काव्य में वे एक व्यापक कैनवास पर मध्यकालीन इतिहास का चित्रण करते हैं । ऐसा करते समय अपने काव्य को इतिहास की बीती घटनाओं का मात्र दस्तावेज न बनाकर उसे सांस्कृतिक पुनरुत्थान का सूर्य बनाया है । कविता को छायावादी काव्य प्रवृत्तियों और अपने दर्शन की सुन्दर अभिव्यक्ति का आधार बनाया है । इस दृष्टि से देखा जांय तो 'तुलसीदास' में इतिहास है, कल्पना है यथार्थ है, दर्शन है इन सब का सुन्दर समवेत स्वर है ।

## 25.6. तुलसीदास

"तुलसीदास का प्रथम अध्ययन, पश्चात पूर्व संस्कारों का उदय, प्रकृतिदर्शन और जिज्ञासा, नारी से मोह, मानसिक संघर्ष और अंत में नारी द्वारा ही विजय आदि वे मनोवैज्ञानिक समस्याएँ हैं, जिन्हें लेकर कवि ने कथा की विस्तार दिया है ..... ।"

इस प्रकार स्पष्ट है कि इस कथानकीय 'क्षण-बोध' का विस्तार एक पूर्णता मनोवैज्ञानिक एवं रहस्यवादी भावना-प्रणाली पर हुआ है । इसमें नाटकीयतः का समावेश आरम्भिक पद्य से ही हो जाता है -

**"भारत के नभ का प्रभापूर्ण'**
**शीतलच्छाया सांस्कृतिक सूर्य**
**अस्तमित आज रे - तभस्तूर्य दिङ्मंडल,**
**उर के आसन पर शिरस्त्राण**
**शासन करते हैं मुसलमान,**
**है ऊर्मिल जल ; निश्चलत्प्राण पर शतदल ।"**

काव्य का आरंभ विषाद से हुआ है । यह विषाद राष्ट्र जीवन पर आए संकटों के कारण है । कवि मध्ययुगीन भारत के हासोन्मुख वातावरण का मार्मिक वर्णन करने लगते हैं और 'भारत के नभ का प्रभापूर्ण शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य को अस्तमित' होते देखकर बड़े दुख से तत्कालीन भारत की हीन दशा की ओर संकेत करते हैं । निराला अपने काव्य के आरंभिक के छंदों में अतीत की सांस्कृतिक गरिमा के वैभवशाली दिनों का स्मरण करते हुए उन्हें एक एक करके वर्तमान के मानस पटल पर अंकित कराते जाते हैं, भारत का सांस्कृतिक सूर्य अस्त हो चुका है । चारों ओर अंधकार छाया हुआ है मुसलमान शासकों का शासन चल रहा है, ये शासन क्या चला रहे हैं, हमारे दिलों पर अपना आसन जमाकर हमें हिलने-डुलने भी नहीं दे रहे हैं । उनके दर्प भरे शासन से भारतीय जन मानस अपनी पहचान को विस्मृत करके

एकदम किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया है जो कि चिंता का विषय है जैसे संध्या के मेघ सारे आकाश को घेरकर दिन के उज्वल प्रकाश को निगल जाते हैं वैसे ही विदेशियों ने पंजाब, कौशल, बिहार आदि पर कब्जा करते हुए सारे भारत को अपने अधीन कर लिया है । उनके एक छत्र साम्राज्य के अधीन में आकर भारतवासी अपना अस्तित्व खो बैठे हैं । इस प्रकार निराला ने भारत के राजनैतिक, सांस्कृतिक पराभव के दृश्यों को सिलसिले वार देकर पराजित देश की दयनीय स्थिति का बोध कराते हुए देशवासियों के सम्मुख अतीत के स्वर्णिम पृष्ठों के प्रेरणादायी प्रसंगों को प्रस्तुत किया है । कवि निराला इतिहास के उन प्रसंगों का स्मरण करते थक्ते नहीं क्योंकि इन्होंने भारतीय जातीय गौरव की रक्षा के हेतु प्रेरणा दी थी । बुंदेलखंड का शौर्य कहाँ गया जिसके सामने बड़े से बड़े बलवान शत्रु भी नत मस्तक हो जाते थे, सूर्य की प्रखर किरणों के सम्मुख अंधकार जैसे नौ दो ग्यारह हो जाता है वैसे इन वीरों के सामने कोई खडा नहीं हो सकता था । मगर दुर्भाग्यवशात बुंदेलखंड आज ऐसा आभाहीन हो गया है कि वीरान सा लग रहा है, उत्सव या मेले के बाद जैसे कोई प्रदेश सूना-सूना सा लगता है वैसा लग रहा है । कालिंजर का गढ़ आज बन्दगगृह बन चुका है । वीर पिंजडे में हैं और कायर गीदडों की भाँति संभ्रम मना रहे हैं । भारत के राजपूत्तवीर अपनी जानों की बाजी लगाकर अदम्य साहस से आखिरी साँस तक लड़कर स्वर्ग सिधारे । वे भारत की रक्षा के लिए आए हुए देवदूत थे । एक ओर निराला अतीत का स्मरण दिलाते हैं दूसरी ओर वर्तमान की यथार्थता के दर्शन भी कराते हैं । मुगलों के दुर्दांत आक्रमण से भारत की समूची शक्ति क्षतविक्षत हो चुकी है । उनका साम्राज्य क्या स्थापित हुआ, उनकी संस्कृति की छाव पूरे देश पर पड़ी यानी इस्लामी संस्कृति का रंग भारतीय जन जीवन पर चढ़ गया है । भारतवासियों ने अपनी पीचान खोकार अपनी पराजय स्वीकार की है । फलतः मुगल राजा अपना कोई प्रतिद्वंद्वी न पाकर निश्चिंत हैं । निश्चिंत होकर ये विलासी जीवन बीता रहे हैं, इस विलास में भारतवासी भी भागीदार

हुए हैं । भारतीयों की यह दासता, गुलामी कवि के लिए चिंता का विषय रही है । इसलिए सोचने लगते हैं कि क्या ऐसा कोई व्यक्ति कहीं होगा जोकि जडग्रस्त भारतीय मानस को नई चेतना से देदीप्यमान कर सके । स्वतंत्रता और स्वाभिमान की शंखध्वनि से गुलाम और पराजित जनता के दिल और दिमाग को पुनरुज्जीवित कर सके । आत्मशोध और इतिहास की पहचान ही खोयी हुई संपदा को पुनःप्राप्त करने का एक मात्र विधान महसूस करते हुए निराला उस शक्ति का अन्वेषण करने लगते हैं । काव्य के आरंभ के दस छंदों में निराला ने भारत के राजनैतिक, सांस्कृतिक पराभव के अनेक दृश्य प्रस्तुत करके तुलसीदास के आविर्भाव के पूर्व की ि्वसंगतियों का रेखांकन किया है और इनसे देश को उभारने के लिए तुलसी जैसे लोकनायक के अवतार को जरूरी समझा है । तुलसी का कर्मक्षेत्र विदेशी आक्रमणों से आक्रांत है जिसका उद्धार करना उनका दायित्व बना है ।

## 25.7. राजापुर और तुलसीदास

निराला अपने काव्य की पृष्ठभूमि के रूप में भारत की दुर्दशा का चित्रण करके फिर उस राजापुर की ओर मुड़ जाते हैं जो कि तुलसी का जन्मस्थान है और कवि को इस गाँव से भविष्य निर्माण की अनंत संभावनाएँ दिखाई पड़ती हैं । निराशा एवं चिंता से ग्रस्त कवि मानस को आशा की किरण राजापुर में दिखाई पड़ती है जहाँ युगपुरुष तुलसी का जन्म हुआ है । यह राजापुर यमुना नदी के तट पर है । यह श्रेष्ठ नगर है जो कि अपवाद के रूप में विलासिता से मुक्त है । इस नगर के भवनों के गुंबज ज्योतिर्मय हैं । कवि इस नगर को 'सकल सुख संपन्न नगर' मानते हैं और ऐसे नगर में तुलसीदास का जन्म हुआ है ।

तुलसीदास के व्यक्तित्व के प्रति निराला का विशेष आकर्षण है क्योंकि निराला मानते हैं कि यह तुलसीदास लोकोद्धारक है, रत्नचेतन है । ब्राह्मण-कुल का दीपक है । अध्ययन चिंतन और मंथन से इन्होंने अपने व्यक्तित्व को बनाया है, यह तुलसीदास

विशाल नेत्रोंवाला, निर्भीक व्यक्तित्ववाला और अत्यंत प्रतिभाशाली है जिसका व्यक्तित्व स्मरण रखने योग्य है । यह तुलसीदास राजापुर गाँववालों का नयनतारा है । इसकी प्रतिभा की सुगंध चारों और बिखरी हुई है ।

## 25.8. प्रकृति के द्वारा दायित्व का बोध

निराला के काव्य का मुख्य आलंबन प्रकृति है । वैसे छायावादी काव्यधारा के तमाम कवियों की प्रेरणाभूमि प्रकृति ही रही है । इस प्रकृति के प्रांगण में ही महान काव्य-प्रतिभाओं का विकास हुआ है । तुलसीदास भी प्रकृति प्रेमी थे । प्रकृति उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग रही है । इस दृष्टि से निराला सहजरूप में तुलसीदास को चित्रकूट ले जाते हैं जहाँ की प्रकृति कवि तुलसी को जहाँ अपनी श्रीसंपदा के दर्शन कराती है वहाँ अपनी कहानी भी सुनाती है । वहाँ की प्रकृति की संतरंगी दुनिया के दर्शन ने तुलसी के हृदय में अनोखी अनुभूतियों को जागृत कराया फलस्वरूप उसके मन में जो भाव-मंजूषा थी उसको ऐसा उद्दीपन मिला कि कवि हृदय उस वातावरण से स्पन्दित हुआ । निराला ने प्रकृति की गोद में तुलसी की प्रतिभा का विकास दिखा कर तुलसी के काव्य को प्रकृति के प्रति ऋणी ठहराया है । निराला ने 'तुलसीदास' काव्य में प्रकृति की प्रत्यक्ष सत्ता के द्वारा अप्रस्तुत की व्यंजना की है । अर्थात् प्रकृति का आलंबन लेकर देश की विस्मृत सभ्यता, संस्कारों एवं गरिमा का स्मरण दिलाने का प्रयास किया है । प्रस्तुत से अप्रस्तुत का वर्णन करने में निराला ने यहाँ बड़ी सफलता प्राप्त की है । डॉ.प्रेमशंकर के शब्दों में 'सब से महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इसी प्रकृति के माध्यम से निराला पराभूत राष्ट्र के दयनीय दृश्य उभारते हैं । वे यहाँ इतिहास के निकट जाने की कोशिश करते हैं । मुगलों की सभ्यता भोग विलास पर आश्रित थी और उसका इतना व्यापक कुप्रभाव था कि भारत की आध्यात्मिक चेतना लगभग मेघाच्छन्न हो गयी थी ।' इस मेघाच्छादित संस्कृति का उद्धार करना तुलसीदास का दायित्व था । प्रकृति इस दायित्व

को समझाने का प्रयत्न करती है । चित्रकूट की मनोहर प्रकृति के अवलोकन से तुलसी का अंतर्मन पुरानी स्मृतियों में खो गया । वह ऐसा अनुभव करने लगा कि मानो वह प्रकृति उसकी चिरसंगिनी है जिसे वह विस्मृत कर चुका है । किंतु विस्मृत प्रकृति सौंदर्य अब पुनः उसके दिल और दिमाग में नई चेतना का संचार करा रहा है । उसके अंतस्थल में सुषुप्तावस्था में जो संस्कार थे वे अब जागृतावस्था में आ गए हैं । उस वन का प्रत्येक वृक्ष, लतावल्लरियाँ और तृण सौंदर्य की खान हैं । ये सारे अपनी मंद मुस्कान द्वारा ऐसा आभास दे रहे हैं मानो लगता है कि सौंदर्य छलक रहा हो । दूसरी ओर इन मुस्कानों में विषाद की छाया भी है । यह समस्त प्रकृति अपनी बाहुओं में समा लेने के लिए प्रियजनों को बुला रही है । प्रकृति के इन व्यापारों से तुलसीदास मुग्ध हुए ।

## 25.9. बोध प्रश्न

1. पठित इकाई के आधार पर निराला के काव्य-प्रवृत्ति के बारे में लिखिए ।
2. भक्ति शिरोमणि तुलसीदास तथा क्रान्तिद्रष्टा निराला की तुलना कीजिए ।
3. निराला अपने काव्य तुलसीदास में भारत की गरिमा वर्तमान की दुर्दशा तथा भविष्य के बारे में निराशा कैसे व्यक्त किया है ?

## NOTES

## NOTES

## इकाई छब्बीस : तुलसीदास : एक विवेचन

### इकाई की रूपरेखा

26.0. उद्देश्य

26.1. प्रस्तावना

26.2. निराला तुलसी की प्रतीक्षा में

26.3. कर्म क्षेत्र की ओर तुलसी की यात्रा

26.4. मध्यकालीन सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन : एक मंथन

26.5. राम : आदर्श व्यक्तित्व

26.6. नारी सौंदर्य के आकर्षण में तुलसी

26.7. बोध प्रश्न

## 26.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने निराला के काव्य में प्रकृति तथा निराला कृत प्रसिद्ध खंडकाव्य तुलसीदास के बारे में अध्ययन किया । तत्पश्चात् भारत की गरिमा, वर्तमान की दुर्दशा तथा भविष्य के बारे में चिंता आदि के बारे में अध्ययन किया ।

## 26.1. प्रस्तावना

इस इकाई में आप मध्यकालीन भक्त कवि तुलसीदास के बारे में अध्ययन करेंगे । तुलसीदास की विवेचना भी करेंगे । हमारे क्रांतिद्रष्टा निराला 'तुलसीदास' की प्रतीक्षा में किस प्रकार बैठे है इसका अध्ययन करेंगे । मध्यकालीन सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन का मंथन भी अध्ययन करेंगे ।

## 26.2. निराला तुलसी की प्रतीक्षा में

'तुलसीदास' काव्य में प्रकृति बीते युग के स्मृति चिह्न के रूप में है । पत्थर बनी हुई अहल्या के समान है जो कि राम की प्रतीक्षा में है । सारी प्रकृति एक ऐसे व्यक्ति की प्रतीक्षा में है जो कि उस पर छायी धूल को पोंछने की क्षमता रख्ता हो । इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो यहाँ प्रकृति अभिशप्त चेतना के रूप में है और पूछ रही है कि क्या तुम भूल गए कि तुम जंगम हो, चेतनशील हो, अब तक तुम अपनी चारों ओर की प्रकृति को क्या भूल गए थे ? मगर, अब तो जाग जाओ । जिस प्रकृति कोतुम अब देख रहे हो वह म्लान हो चुकी है, उसकी छवि धूली-धूसरित हो चुकी है । इसके सौंदर्य को पूर्ववत आलोकमय एवं तेजोमय बनाने के लिए 'तेज' की आवश्यकता है और वह तेज तुम ही हो ।

**'देखो यह धूलि-धूसरित छवि**
**छाया इस पर केवल जड़ रवि कहता'** - कहकर

कवि मध्ययुगीन भारत की दुर्दशा को दर्शा रहा है । विदेशी आक्रमणों की प्रखर रविकिरणों की धूप से ऋतुएँ अपना सहज रंग

खोकर निस्तेज हो चुकी हैं । मानव और प्रकृति दोनों निष्प्राण हो चुके हैं । इनके प्राचीन संस्कार लुप्त हो चुके हैं, इनके आभूषण गुप्तधन बन चुके हैं । अतः हे कवि, तुम ऐसे गीत गाओ कि वह मुक्ति का द्वार खोले पक्षी जैसे मुक्त गगन में ऊर्ध्वोन्मुखी होकर उड़ रहे हैं, वैसे तुम भी ऐसे काव्य का सृजन करो कि वह इस धूलि-धूसरित संस्कृति का पुनरुत्थान कर सके, यहाँ की जनता को अंधकार से ज्योतिर्मयलोक की ओर ले जा सके और सत्य, त्याग और उच्च मूल्यों का गुंजन तीनों लोकों में कर सके । तुम सुषुप्त तारों को पुनः झकृत कराओ जिससे जड़ रूपी, पत्थर रूपी प्रकृति में भी चेतना का संचार हो सके ।

**मुगलों का प्रभाव, खंडित राष्ट्रजीवन**

निराला ने तत्कालीन भारत को विसंगतियों का देश कहा है । कवि के शब्दों में -

**'अन्यथा यहाँ क्या ? अंधकार,**
**बन्धुर पंथ, पंकिल सरि, कगार,**
**झरने झाडी, कंटक, विहार पशु-खग का'**

अर्थात् यहाँ ऊबड़-खाबड़ रास्ते हैं, कीचड से युक्त नदियाँ हैं, विषम प्रवाह वाले नदी-नाले निर्झर हैं, भयंकर झाडियाँ हैं, तीखे काँटे हैं, भयानक पशु-पक्षी-मृग हैं । इन पंक्तियों में तत्कालीन जीवन विधान की ओर संकेत किया जा रहा है । मुगलों के आक्रमण से पूरा राष्ट्र जीवन अस्त-व्यस्त हो चुका है । ज्ञान एवं सांस्कृतिक जीवन का कोई चिह्न रह नहीं गया है ; आस्था एवं अस्मिता रहित जीवनयापन जारी है । इस जडग्रस्त जीवन को राम का चरण स्पर्श चाहिए, जैसे राम के चरण स्पर्श से पत्थर से अहल्या सजीव हो उठी उसी प्रकार जडवत् संस्कृति में जीवंतता तभी आ सकती है जब कि राम सदृश्य चेतना का आगमन होता हो और वह अपने धनुष की टंकार से सारे वातावरण को प्रतिध्वनित करता हो । जब तक ऐसा कवि आयेगा नहीं तब तक देश विषमताओं से पीडित ही रहेगा ।

इस बात पर प्रकृति चिंतत है कि. इस्लामी संस्कृति का प्रभाव भारत पर अच्छा नहीं हो रहा है । उसके प्रभाव से भारतीय संस्कृति पराजित है और समाज खंडित है । चारों ओर विलासमय वातावरण है, मूल्यों का ह्रास हुआ है । कामदेव के केशर के कोमलकांत रज जैसे पृथ्वी और आकाश में रंग जाते हैं वैसे कामवासना, सारे भारत पर छायी हुई है । पूरा परिवेश अभिशप्त हुआ है । इसके परिणाम की ओर संकेत करते हुए निराला कहते हैं -

**'छिप रहे उसी से वे प्रियतम**
**छवि के निश्चल देवता परम'**

जो सभ्य जन है वे यद्यपि जागृतों के जैसे दिखाई पड़ते हैं, मगर वे जागृत नहीं हैं, वे सुषुप्तावस्था में ही है । देश का वातावरण ऐसा आभास देता है कि वहाँ शाँति है, मगर वह शांति नहीं है, शांति का केवल भ्रम होता है । जिस देश में मूल्यों का ह्रास हुअ है । मुक्त रूप से साँस लेने को भी कोई आजाद नहीं है तो उसे सच्चे अर्थ में शांतिदेश कैसे स्वीकार किया जा सकता है ? कवि इस बात पर चिंतित है क्या ज्ञान और चेतना विहीन देश का कोई अस्तित्व होगा ?

## 26.3. कर्म क्षेत्र की ओर तुलसी की यात्रा

प्रकृति ने देश और देशवासियों पर आई हुई विपत्तियों की ओर कवि तुलसीदास का ध्यानाकर्षण किया तो तुलसी के ज्ञान चक्षु खुलते हैं । उनका मन जागृतावस्था में आकर कर्म की ओर प्रवृत्त होने को सोचता है । प्रकृति की प्रेरणा से जगत की जड़ता का भेद करने को तुलसी का हृदय लालाँचित होता है । अब तुलसीदास कर्मयोगी बनने का निश्चय करते हैं । जैसे वन-प्रान्तर में पक्षी ऊर्ध्वगामी होते हैं वैसे तुलसीदास का मन भी मुक्त गगन में उड़कर सोचने लगा कि भारत को किस प्रकार इस वातावरण से मुक्त किया जा सकता है ? भारत को पुनः ज्ञान, कर्म एवं

संस्कृति-बोध की दीक्षा कैसे दी सकती है । इसी सोच में तुलसीदास चिंतन के किस घरातल पर पहुँचे, इस ओर संकेत करते हुए निराला-

**'दूर, दूर तर, दूर तक, शेष**
**कर रहा पार मन नभो देश'**

शब्दों का प्रयोग करते हैं । यानी तुलसीदास उच्च भावभूमि पर सोचने लगते हैं, उदात्त मूल्यों का चिंतन करने लगते हैं । जैसे तरंग ऊर्ध्वमुखी होते हैं वैसे तुलसी का मन भी ऊर्ध्वगामी हुआ । प्राचीन संसकारों का 'रंग छडते' हुए, नए मूल्यों का आविष्कार करते हुए तुलसी ज्ञान की उच्चतम स्थितियों तक पहुँच गए । वहाँ जाकर तुलसीदास का मन प्रकृति के शोक के साथ ऐसा स्पंदित होने लगा कि उनकी दृष्टि अपने देश की ओर गई तो वे तिलमिला उठे । क्योंकि भारत के नभ के सूर्य को राहु ने ग्रस लिया है -

**'भारत के नभ का प्रभापूर्ण**
**शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य**
**अस्तमित आज रे ।**
**उस मानस ऊर्ध्व देश में भी**
**ज्यों राहु ग्रस्त आभा रवि की**
**देखी कवि ने छवि छाया-सी, भरती-सी**
**भारत का सम्यक देशकाल'**

तुलसी की आँखों से निराला ने मध्ययुग की समस्त विसंगतियों की बड़े मार्मिक रूप से अभिव्यक्ति की है । तुलसी का मन आत्मशोध करने लगता है और इतिहास के निकट जाकर तत्कालीन वैदृश्यों को उघाडने लगता है । इस्लामी संस्कृति का विलासी रंग समूचे देश पर छा रहा है । किन्तु वहाँ एक अंतराल भी है यानी वह पूर्णरूपेण अपना प्रभाव डाल कर भारतीयों को अपने वश में कर पाने में इसलिए असमर्थ है कि इन दोनों संस्कृतियों का परिवेश और इनके संस्कार भिन्न-भिन्न हैं । 'बृहत् से अंतराल करती सी' पंक्ति में इस ओर निराला ने इशारा किया है ।

## 26.4. मध्यकालीन सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन - एक मंथन

एक ओर अंतराल है, तो दूसरी ओर यह भी सच है कि भारतीय समाज खंडित हो चुका है । भारत जो समन्वयवादी देश था और जहाँ की संस्कृति उदात भावों से युक्त थी, वहाँ दरारें आ गई हैं, साधना पद्धतियों और पूजा विधानों में आपसी विरोध आ गए हैं तथा ये एक दूसरे से टकरा रहे हैं । हर संप्रदाय परस्पर प्रतिशोध की ज्वाला में जल रहा है । फलतः देश की सांस्कृतिक एकता एवं मानवीय मूल्य भस्मीभूत होते जा रहे हैं । धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र में लोगों की मानसिकता जडवत हो चुकी है । उस समय की त्रासदी यह है कि इन सब के बावजूद जनता यह समझती है या वह इस भ्रम में है कि वह चेतना से युक्त है, उसकी संस्कृति जागृत हैं । तुलसी परिभ्रमित जनता की शोचनीय व दयनीय हालत को देखकर बड़े आद्र हृदय से सोचते हैं । निराला ने इस मोड़ पर तुलसीदास को भावुक के रूप में नहीं किंतु कठोर यथार्थवादी के रूप में चित्रित किया है । आत्ममंथन की इस घड़ी में तुलसीदास को यथार्थता की भूमि पर खडा करके इतिहास का अवलोकन कराया है । इसलिए तुलसीदास भावुक न बनकर अत्यंत संयमी बनकर सोचते हैं कि देश की वर्तमान र्दुशा के लिए स्वयं देशवासी उत्तरदायी हैं । इन्होंने देश की सामाजिक संस्कृति को विस्मृत करके विलास को अपनाया, मिथ्या को सत्य माना, नश्वर को शाश्वत माना । इनका लाभ इस्लाम संस्कृति ने उठाया । जैसे हर ऋतु अपना विशिष्ट रंग समस्त प्रकृति पर डालती है वैसे इस्लामी जीवन विधान का प्रभाव भारतवासियों पर पड़ता गया । इस रंग में भारतवासी कैसे रंगे गए इसका निरालाने मार्मिक शब्दों में वर्णन किया है यथा 'ऋतु का प्रभाव जैसे संचित तरूतन में' तुलसी ने पराजित मानस एवं बिखरे समाज का उद्धार करने के लिए 'साकार हुआ ज्यों निराकार' कहकर एक आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम के जन्म होने की ओर भी संकेत किया है । 'निर्गुण' में

आलंबन नहीं होता जब कि तुलसी ने आलंबन की प्रतिष्ठा करके आदर्श समाज का निर्माण करना चाहा है ।

हिन्दी की प्रगतिशील काव्यधारा के पुरोधा कवियों में से निराला का अग्रगण्य स्थान है जिनके काव्य में दीन दलितों के प्रति हार्दिक संवेदना है । निराला मानते हैं चातुर्वर्ण्य व्यवस्था से युक्त समाज में बिखराव एवं विघटन आ जाने के कारण सामाजिक व्यवस्था में शिथिलता आ गई है । वर्ण एवं वर्ग चेतनाने भारतीय समाज को खंडित कर दिया है, स्वार्थ ने इनको बिखरा दिया है, बिखरे हुए लग कमजोर होते हैं । शुरु में वर्णाश्रम धर्म की नींव ही हिल गई और सब भटक गए । क्षत्रिय अपना कर्तव्य भूलकर आपस में जूझने लगे, ब्राह्ण चाटुकार हुए । ये देश की समग्रता एवं एकता को नजरंदाज कर चुके थे । दूसरी ओर जो 'शुद्र' थे, वे 'निस्सहाय' थे, 'दीन' और 'कंकाल काय' थे । जीविका चलाना भी इनके लिए दुश्वार हो गया था । इस वर्ग की पीड़ा का कोई अंत नहीं था । वे पशुवत् थे । बस, उनकी श्वास चल रही थी । यहाँ तक कि इनकी लाचारी भी पशुओं की सी ही थी । जैसे पशु चुपचाप प्रतिरोध किए बिना अपने मालिक कीसारी यंत्रणाओं का सहन कर लेते हैं वैसे ही दलित वर्ग लाचार था, अपनी नियति पर शोक कर रहा था क्योंकि वर्णाश्रम व्यवस्था में सेवा करना इनका व्रत बन गया था । इस वर्ग के शापितों के प्रति निराला अपनी हार्दिक अनुकंपा व्यक्त कर रहे हैं - तुलसी के माध्यम से ।

निराला वर्णाश्रम व्यवस्था में आए परिवर्तनों की ऐतिहासिक समीक्षा प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि शुरू में यह व्यवस्था कर्म पर आधारित थी, उत्तम कर्म से कोई भी व्यक्ति श्रेष्ठ बन सकता था किंतु परर्तीदिमों में इस व्यवस्था में भी कट्टरता आ गई । कर्म का स्थान नगण्य होकर वर्ण का स्थान प्रधान हो गया, जन्म ही सब कुछ बन गया । शूद्र को ब्राह्मण होने के अधिकार से वंचित रखा गया । फलतः असंतोष इस वर्ग में फैलता गया । एकता में फूट आई । इसका लाभ विदेशियों नें उठाया । पूरे देश पर इस्लामी

क्षम छा गया । तुलसीदास देश की इस दुर्दशा पर सोच रहे हैं और तत्कारण चिंताक्रांत हैं -

**इस छाया के भीतर हैं सब,**
**है बंधा हुआ सारा कलरव**
**भूले सब इस तक का आसव पी पीकर ।**
**इसके भीतर रह देश-काल**
**हो सकेगा न रे मुक्त-भाल**
**पहले का सा उन्नत विशाल ज्योतिःसर ।**

चिंता इस बात कीर है कि देशवासी विदेशी प्रभाव में आए हैं 'तम का आसव पी पीकर' यानी विलास एवं अज्ञान की मदिरा के नशे में चूर-चूर हुए हैं । इस हालत में तुलसी सोचते हैं कि अब देश का क्या होगा । देश इस अज्ञान के अंधकार से बाहर कब आएगा ? अपनी खोयी हुई प्रतिष्ठा पुनः कब प्राप्त करेगा ? आध्यात्मिक चेतना से लुप्त एवं अभिमान शून्य हुए इस देश में भक्ति और भजन की धारा पूर्ण रूप से लुप्त हो चुकी है । पार्थिवैश्वर्य के आकर्षण में लोग तन्मय हो चुके हैं । अतः भारतवासियों को चाहिए कि पुनर्जागरण की तैयारी करें । भगवान या भाग्यवाद पर भरोसा रखकर निष्क्रिय रहने से मुक्तिद्वार नहीं खुलने वाला है । ज्ञान एवं आत्मबल से विदेशी आक्रमणों को रोका जा सकता है ।

## 26.5. राम : आदर्श व्यक्तित्व

तुलसी देखते हैं : देश के सामने कोई आदर्श नहीं है, मूल्यों का विघटन हो चुका है । भारत के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर छाये हुए काले बादलों को दूर करने और दिशा निर्देश करने के लिए एक महान व्यक्तित्व की जरूरत है । यह महान व्यक्तित्व कौन हो सकता है ? तुलसी के मन में यह विचार आया कि राम ही ऐसा व्यक्तित्व है जो कि हमारे प्राचीन मूल्यों का पुनरुज्जीवन कर सकता है -

'सोचा कवि ने
इस अनिल वाह के पार प्रखर
किरणों का वह ज्योतिर्मय घर
रविकुल जीवन चुंबन कर मानस-धन जो'

निराला ने इन पंक्तियों द्वारा रामचरित मानस की प्रेरणा भूमि की ओर संकेत किया है । तुलसी ने रामायण में मूल्यों का स्रोत देखा, इसलिए ही वे रामचरित की ओर उन्मुख हुए । 'भव अंध-कूप' में पड़े हुए और विदेशी संस्कृति के पाश में बंधे हुए देश को सत्य ओर प्रकाश की ओर यानी 'सत्य के मिहिर द्वार' तक ले जाने के लिए तुलसी यह निश्चय कर लेते हैं कि वर्तमान के विद्रूपों से लड़ना है, जान की परवाह किए बिना अपनी कुर्बानी देनी है, संस्कृति की रक्षा का दायित्व अपने कंधों पर लेना है । इस प्रकार देश को अविद्या, अज्ञान एवं असत्य से मुक्ति दिलाने का निश्चय करते हैं । तुलसी का लोकनायक व्यक्तित्व यहाँ उभर कर आया है । तुलसी सांस्कृतिक पुनर्जागरण का शंख बनते हैं । उपरोक्त पंक्तियों में 'तुलसीदास' काव्य का महान उद्देश्य चित्रित हुआ है ।

## 26.6. नारी सौंदर्य के आकर्षण में तुलसी

पराजित राष्ट्र की संस्कृति का पुनरुद्धार करने का संकल्प तुलसीदास लेते हैं । तुलसी के व्यक्तित्व और प्रस्तुत काव्य का महत्वपूर्ण मोड़ तब आता है जब कि वे नारी-सौंदर्य की ओर आकृष्ट होते हैं । कवि तुलसी का मन ज्योतिविहग की भाँति उच्चतम आलोक में विचरते हुए देश की पतनोन्मुखी संस्कृति का उद्धार करने का संकल्प कर रहा था तो तभी प्राण-संगिनी रत्नावली का सौंदर्य उनके मानस-पटल पर प्रतिफलित हुआ । रत्नावली 'सुन्दरतम' प्रेयसी है, जैसा रूप वैसा नाम है उसका रत्नावली । रत्नावली के रूप और सौंदर्य ने तुलसी को ऐसा बांध रखा है कि इससे मुक्त हो कर बाहर आना उनसे संभव नहीं हो पा रहा है । रत्नावली चुम्बक शक्ति बन गई है । निराला ने प्रस्तुत

प्रसंग में नारी को एक प्रखर शक्ति के रूप में चित्रित करके उसके सामने पुरुष की हार स्वीकार की है ।

तुलसी के नारी आकर्षण और रत्नावली के प्रेम का संदर्भ लेकर निराला ने स्वच्छंदवादी प्रेम का मनोहर वर्णन किया है । छायावादी काव्यधारा के सशक्त कवि निराला ने नारी प्रेम और सौंदर्य का उन्मुक्त चित्रण किया है, चित्रोपम शैली में नारी के अंतरंग को एकदम उंडेलकर रखा है, नारी के प्रति आदर भाव प्रकट करते हुए उसे सम्मानित किया है ।

निराला ने रत्नावली का चरित्रांकन मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया है । रत्नावली नव वधू है जो अपने प्रियतम को सदा अपने निकट देखना चाहती है । नारी सहज आकांक्षाएँ उसे घेरी हुई हैं इसलिए ही वह अधिकार वाणी से यह आग्रह करती है कि वह कहीं न जाए -

**'जाते हो कहाँ ? ' तूले तिर्यक**
**दृग, पहनाकर ज्योतिर्मय स्रक**
**प्रियतम को ज्यों बोले सम्यक शासन से ।**
**फिर लिये मूँद वे पल पक्ष्मल**
**इन्दीवर के से कोश विमल**
**फ़िर हुई अदृश्य शक्ति पुष्कल उस तन से ।**

यानी तुलसी रत्नावली के प्रेम के बंधन में, प्रियतम के नयनों की कोठरी में ऐसे बंध गए कि वे अपंनी सुध-बुध खो गए । तुलसी का मन रूपी भ्रमर रत्नावली के नयन रूपी कमल में ऐसा बंध गया कि वे अपना गन्तव्य भूल गए, मंजिल भूल गए । देश के लिए कुछ कर दिखाने का उनका संकल्प आकर्षण के पारावार में रह गया । तुलसी का मन जो 'ऊँचे नभ' पर गुंजन कर रहा था यानी जो तुलसी उच्च मनोभूमि पर ज्ञान की बातें सोच रहे थे, अब नारी के बंधन में बंधकर एक प्रकार से पथभ्रष्ट हो गए हैं । तुलसी की आंतरिक चेतना जो ऊर्ध्वमुखी थी, अब नारी के सौंदर्य में बंध

गयी है । तुलसी का मन लौकिक धरातल पर उतर कर उसी प्रकृति को निहारने लगता है तो प्रकृति का एक दूसरा ही रूप दिखाई देने लगता है । जिन प्राकृतिक दृश्यों ने तुलसी को तत्कालीन भारत की दुर्दशा की झलक प्रस्तुत की थी, अब उन्हीं दृश्यों में दूसरा रंग दिखाई पड़ने लगा, प्रकृति में नई चेतना आई हुई सी दिखाई पड़ने लगी । तब के म्लान वातावरण में अब उल्लास छलकता हुआ-सा दिखाई देने लगा । सारा वातावरण एकदम सुरभित हुआ है । प्रकृति के इस महकते हुए परिवेश का निराला ने बड़ा मार्मिक वर्णन किया है -

**'अब वही प्रकृति पर रूप अन्य**
**जगमग-जगमग सब वेश वन्य**
**सुरभित दिशि-दिशि, कवि हुआ धन्य मायाशय ।**

प्रकृति में तुलसी का मन ऐसा रम गया कि सारी प्रकृति में मानो अपनी प्रियतमा का समूचा सौंदर्य प्रतिफलित हुआ हो, ऐसा भास होने लगा । प्रकृति के विभिन्न रंगों में, दृश्यों में पत्नी की आभा दिखाई पड़ने लगी । तुलसी प्रकृति और नारी सौंदर्य के बीच अभिन्नता देखने लगे । छायावाद की प्रतीकात्मक शैली का श्रेष्ठ उदाहरण इस प्रकृति वर्णन में है जहाँ प्रस्तुत के माध्यम से अप्रस्तुत को दर्शाने का अद्‌भुत कौशल है -

**'यह श्री पावन, गृहिणी उदार**
**गिरि कर दरोज, सरि पयोधार**
**कर वन-तरु, फेला फल निहारती देती,**
**सब जीवों पर है एक दृष्टि**
**तृण-तृण पर उसकी सुधा-वृष्टि**
**प्रेयसी, बदलती वसना सृष्टि नव लेती ।**

कवि ने ऋतुओं के परिवर्तन की नारी के बदलते वसनों से तुलना करके आकर्षणीय बिंब का निर्माण किया है । प्रकृति के चेतोहारी उल्लास एवं वैभव में अपनी प्रियतमा को देखकर तुलसी का मन उसके आलिंगन के लिए तरस उठा है ।

निराला ने नारी के प्रति तुलसी के आकर्षण को पुरुष के सहज भाव के रूप में चित्रित किया है । स्वप्निल लोक में रत्नावली का सौंदर्य दर्शन कराकर उसके आकर्षण को सत्य माना है और तद्वारा तुलसी को देवता पुरुष के रूप में नहीं अपितु एक मनुष्य के रूप में चित्रित किया है । तुलसी नारी के मांसल लोक से जैसे ही बाहर आए तो पुनः उसी प्रकृति प्रान्तर में अपने को पाए जहाँ उनके मित्र थे और प्रकृति अपने पूर्व रूप में ही थी ।

निराला भारत के तीर्थों और धार्मिक केन्द्रों का महत्व नकारते नहीं हैं, किंतु वहाँ हमारी धार्मिक एवं आध्यात्मिक चेतना के वैभव को देखते हैं । इसलिए ही निराला का तुलसीदास धार्मिक स्थानों का भ्रमण करते हैं । तुलसीदास ने पूर्वस्थिति में आकर पंचतीर्थ और अनेक देवी देवताओं के दर्शन किए हनुमान-धारा और कामदगिरि की परिक्रमा की, जानकी कुंड, स्पटिक शिला, अनसूया वन और भरत कूप आदि के दर्शन किए । तुलसी तथा उनके मित्र भारत-दर्शन करके अपने आवास चले ।

नारी के आकर्षण को सब से बड़ी शक्ति के रूप में साबित करते हुए उसके सामने तुलसीदास के मानसिक पराभव का चित्रांकन निराला ने मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया है । भारत दर्शन के दौरान जिस प्राकृतिक सुषमा का रसास्वादन तुलसी ने किया था जिसका स्मरण रह रहकर हो आने लगा और तद्वारा अपनी प्रियतमा की रूप राशि भी उनके मनःपटल पर मंडराने लगी । नारी के सामने तुलसी का मन ऐसा दुर्बल पड़ा कि उन्मादावस्था में वह पहुँच गया । प्रकृति की सुरम्य आभा की अपनी प्रियतमा पर आरोपित करके देखने की प्रवृत्ति छायावादी कवियों में सामान्य रही है जिस की झलक यहाँ है । निराला ने तुलसी की पत्नी के सहज सौंदर्य में प्रकृति के विराट दर्शन करवा कर व्यष्टि में समष्टि को दिखाया है । 'प्रेयसी के अलक नील, व्योम' कहकर उसके केश गुच्छों में नील गगन का आभास दिखाया है । उसके अंगांगों में प्रकृति की प्रतिच्छवि को देखकर

तुलसी मोहमुग्ध हो जाते हैं' ; 'इच्छाओं का वही छोर जीवन-भर' कहकर नारी प्रेम को अपना गन्तव्य मानते हैं । तुलसीदास पत्नी के इस सौंदर्य के माध्यम से जगत के व्यापारों का अवलोकन करते हुए यह अनुभव करते हैं सारा संसार मानो सौंदर्य के इस बंधन में बंधा हुआ है और उनकी प्रेयसी के प्रेम एवं हृदय में विषयवासना का अनंत सागर हिलोरें ले रहा है । तुलसी का मन भी उसकी ओर ऐसा आकृष्ट हो गया कि ज्ञान और सत्य से साक्षात्कार करने की उनकी उदात्त चेतना अपना अस्तित्व भूलकर नारी मोह के सागर में अंतर्विहित हो गई है । नारी के दृग-युग्मों के आकर्षण में तुलसी का जीवन ही भटक गया, उसके अंतर्चक्षु भी अंधे हो गए । पराजित भारत का उद्धार करने के लि जो चेतना प्रतिबद्ध थी, वह अब अपने लक्ष्य से अलग हो कर रह गई है । तुलसी की इस भटकन की ओर संकेत करते हुए निराला कहते हैं कि तुलसी को नारी पलकों के उस पार का जगत ही दिखाई नहीं पड़ा -

**वे पलकों के उस पार, अर्थ**
**हो सका न, वे ऐसे समर्थ ;**
**सारा विवाद हो गया वयर्थ, जीवन ; क्षय ।**

किन्तु अब तुलसी का सत्य अब दूसरा हो गया है वे इस स्थिति में नहीं है कि सोचें कि सत्य क्या है । नारी सौंदर्य और उसके आकर्षण को सब कुछ मानने के पक्ष में तुलसीदास हैं । तुलसीदास को नारी का शरी ही मोक्ष का मार्ग साबित हुआ । मोहासत्ता मन सोचने लगा कि -

**बंध के बिना, कह, कहाँ प्रगति ?**
**गति हीन जीवन को कहाँ सुरति ?**
**रति रहित कहाँ सुख ? केवल क्षति-केवल क्षति ।**

तुलसी की इस मनोदशा का चित्रण निराला ने मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर किया है । दमित कामचेतना मनोविकारों को जन्म देती है, दमित आशाओं की आत्मा उच्छृंखलता का शिकार होती है जबकि यौवन की सहज आकांक्षाओं की पूर्ति जो करता है

उसका जीवन सहज रहता है, विकार रहित रहता है । तुलसी के चरित्र की विशेषता इस बात में है कि वे इस आकर्षण को नकारते नहीं झूठ बताते नहीं अथवा अपनी भावनाओं के प्रति अप्रमाणिक भी नहीं हैं । अपने मन की भावनाओं के प्रति वे प्रतिबद्ध हैं । इसलिए ही वे 'बंध' को, 'सुरति' को अनिवार्य मानते हैं और इसके बिना जीवन में सुख की अपेक्षा 'क्षय' को देखते हैं । तुलसी मनुष्य के जीवन में ही नहीं अपितु सारी प्रकृति में इस 'कामचेतना' को क्रियाशील देखते हैं । जैसे सुगंधी का संबंध फूल से है वैसे प्रियतमा से मेरा संबंध 'आलिंगन' और 'चुंबन' से है । ये अभिन्न हैं । ये संबंध ऐसे हैं कि ये 'युक्त' होते हुए भी मुक्त हैं । इस प्रकार पत्नी के प्रेम को 'सत्य', उसी को जीवन का 'सत्य' और 'अर्थ' और मोक्ष का 'द्वार' मानकर तुलसी इस मोड़ पर नारी के आकर्षण को साधना पक्ष के 'अपथ्य' या 'बाधा' या 'माया' के रूप में मानने को तैयार नहीं हैं । तुलसी का मन इस आकर्षण से बाहर आने को तैयार ही नहीं है क्योंकि रूप, गंध और वासना में उनका मन चकरा गया था, यही कारण है कि सत्य के आलोक में वह आ नहीं पा रहा था । सत्य पर माया की विजय विराजमान हो रही थी ।

## 26.7. बोध प्रश्न

1. तुलसीदास में निराला 'राम' का आदर्श व्यक्तित्व कैसे किया है ? इसका विवेचन कीजिए ।
2. तुलसीदास नारी के प्रति कैसे आकर्षित हुए थे ? स्पष्ट कीजिए ।

## NOTES

## NOTES

## इकाई सत्ताईस : तुलसीदास - एक सर्वेक्षण

### इकाई की रूपरेखा

27.0. उद्देश्य

27.1. प्रस्तावना

27.2. रत्नावली : ज्योतिपुंज

27.3. भारतीय परिवार : स्नेह एवं ममता के आगार

27.4. तुलसी की विरहानुभूति

27.5. ससुराल में तुलसी

27.6. राग से विराग और अज्ञान से ज्ञान की ओर

27.7. तुलसीदास का संदेश

27.8. तुलसीदास काव्य में रस

27.9. खंडकाव्य : तुलसीदास

27.10. तुलसीदास की भाषा

27.11. बोध प्रश्न

## 27.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने निराला तुलसी की प्रतीक्षा में किस प्रकार बैठे थे इसका अध्ययन किया । राम के आदर्श व्यक्ति का अध्ययन भी किया । नारी के प्रति तुलसीदास कैसे आकर्षित हुए इसका अध्ययन किया ।

## 27.1. प्रस्तावना

इस इकाई में 'रत्नावली' एक ज्योतिपुंज के रूप में है इसका अध्ययन करेंगे । पत्नी के बिना तुलसीदास की विरह तथा ससुराल में तुलसी आदि के बारे में अध्ययन करेंगे । तुलसीदास की भारषा, खंडकाव्य आदि अध्ययन करने जा रहे हैं ।

## 27.2. रत्नावली : ज्योतिपुंज

रत्नावली तुलसीदास कीप्रियतमा है, यह एक ऐसी नारी है जिसने माया के दल दल में फंसे और भटके हुए तुलसीदास को सत्य और मोक्ष का मार्ग प्रशस्त किया, इस दृष्टि से रत्नलावली तुलसीदास के भाग की भवतारिणी है । तुलसी की असत से सत्य की ओर, तम से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमृतत्व की ओर ले जाने का श्रेय रत्नावली को है । इस उज्वल चरित्र का चित्रण कवि निराला ने बड़े मनोवेग से किया है । एक समर्पिता एवं उदार चरिता नारी के रूप में रत्नावली का चरित्रांकन हुआ है । 'तुलसीदास' काव्य की मुकुटमणि है रत्नावली ।

निराला ने रत्नावली का परिचय बड़े अपूर्व ढंग से दिया है जिसमें एक ओर रत्नावली जीवंत हुई है तो दूसरी ओर निराला की नारी विषयक आदर भावना साकार हुई है :

**वह रत्नावली, नाम शोभन**
**पति-रति में प्रतनु, अतः लोभन**
**अपरिचित-पुण्य अक्षय शोभन धन कोई ;**
**प्रियकरांलब को सत्य-यष्टि,**

**प्रतिमा में श्रद्धा की समष्टि**
**मायायन में प्रिय शयन व्यष्टि भर सोई ।**

रत्नावली का नाम जैसे सुंदर है वैसे उसका स्वभाव भी निराला था, उसने पति सेवा को अपना धर्म स्वीकारा था । वह उसकी खुशियों को अपनी खुशियाँ मानती थी । तुलसी उसके दैहिक सौंदर्य से तो आकृष्ट थे किंतु आत्मिक सौंदर्य से अनभिज्ञ थे । तुलसी की इस मनोदुर्बलता से परिचित रत्नावली 'सत्य यष्टि' थी जिसके सहारे माया-मोह में भटके तुलसी को सन्मार्ग पर लाना चाहती थी । वह तुलसी के शयन गृह में सोकर अपने पति की काम पिपासा को तृप्त करती थी तथापि उसका व्यक्तित्व ऐसा श्रद्धा-योग्य था कि जिसकी ओर तुलसी का ध्यान ही नहीं था । रत्नावली और तुलसी के व्यक्तित्व में अंतर यह है कि रत्नावली जहाँ शांत एवं गंभीर सागर है वहाँ तुलसी उमडता गरजता सागर है । मोह मदिरा में चूर-चूर होकर तुलसीदास अपने लक्ष्य से वेचलित हुए हैं । सूरज की पहली किरणें जिस प्रकार जगत को ई चेतना और उत्साह प्रदान करती हैं, उसी प्रकार तुलसीदास के क्तित्व में भी नई चेतना और उत्साह को देखना चाहती है कि लसी ज्ञान के आलोक को कब पहचानेंगे, अज्ञान की निद्रा से ब जागेंगे, सत्य के दर्शन कब पायेंगे लौकिक मोह से अलौकिक ाकर्षण की ओर कब पदार्पण करेंगे । रत्नावली का मन इस ार चिंताक्रांत है कि इस चिंता को घर आया भाई देखता है र कहता है 'हँसती उदास तू छाया' अर्थात् तुम्हारे मुख मंडल : वैसे हँसी है किंतु लगता है तुम्हारे हृदय में उदासी है ।

## 27.3. भारतीय परिवार : स्नेह एवं ममता के आगार

कवि यहाँ पर काव्य को नया मोड देता है कि तुलसी का मोह भंग करने के लिए कवि ने रतनावली के भाई के आगमन का प्रसंग लिया है । इस प्रसंग के द्वारा निराला ने भारतीय परिवारों के स्नेह स्निग्ध संबंधों एवं अतःकरण का मर्मस्पर्शी वर्णन किया ै । रत्नावली का भाई प्यार का घनीभूत पुंज है जिसके हर शब्द

में इसका दिल दरिया के रूप में उमड कर आता है । भारतीय परिवारों के आपसी रिश्तों की एक मनोरम झांकी प्रस्तुत प्रसंग में मिलती है । यह 'तुलसीदास' काव्य का बड़ा ही मार्मिक प्रसंग है । भाई का बहन के प्रति सहज स्नेह और प्रेम ऐसा उमड आता है कि वह प्रश्न करता है कि तुम्हारी इस हीन दशा का क्या कारण है ? भाई के उत्कट प्रेम को निराला ने छंद शब्दों में मूर्तरूप दिया है - 'हो गई रतन, कितनी दुर्बल, चिंता में बहन, गई तू गल ।'

भाई बड़े प्रेम से अनुरोध करता है कि तुम अभी घर चलो, तुम्हें देखने के लिए सभी पिता, माता, भाभी, पड़ोसी तरस रहे हैं । शादी के बाद तुम एक बार भी मायके आई ही नहीं हो जब कि तुम्हारी शादी के बाद तुक्हारी कई सहेलियों की शादियाँ हुईं और वे कई बार अपने मायके आ चुकी हैं । 'बेचा वर के घर, आ न सकी' कहकर लोग हमें ताने दे रहे हैं । भाई अपनी बहन के प्रति अपार स्नेह दर्शाते हुए कह रहा है कि हे बहन, क्या तुम अपनी माता को भूल गई ? 'क्या नहीं मोह कुछ माता पर अब तुमको ? कहकर माँ का अश्रु भरा संदेश सुनाता है कि वह किस प्रकार विकल है । माँ का करुण विलाप अकथनीय है । पिता के बारे में, कहता है कि अब पिता 'रमते योगी' हैं जिनके प्राण कभी भी उड सकते हैं । वे 'कूल द्रुम' हैं कि कभी भी गिर सकते हैं । भाभी तो तुम्हें देखने लिए लालायित है ।

भाई अपनी बहन रत्नावली के सामने अपने घर की प्रतिष्ठा की चर्चा करता है और कहता है कि घरवालों की नाक कटी जा रही है क्योंकि घर की बेटी होने के नाते तुम अपने घर आई ही नहीं हो । अपने परिवार की दशा का वर्णन करते हुए भाई कहता है कि -

**'हम बिना तुम्हारे आए घर**
**गाँव की दृष्टि से गए उतर ।'**

और आगे पूछता है कि क्या शादी का अर्थ अपने घर और घरवालों से संबंध तोड़ लेना है ? शादी के बाद मायके का कोई महत्व रह नहीं जाता है ? निराला ने अपने 'तुलसीदास' काव्य में नारी को पुरुष के जीवन का उल्लास, अदम्य उत्साह एवं प्रेरणा का स्रोत माना है । पत्नी और पति के बीच के प्रगाढ़ रिश्तों का विश्लेषण करते हुए यह बताते हैं कि तुलसीदास का जीवन पत्नी के उल्लासमय व्यक्तित्व के सामिप्य से जैसे ही अलग हुआ, एकदम जल बिन मछली की भाँति मचल उठा । सारा वातावरण एकदम निस्सार और शुष्क लगा ।

तुलसी पत्नी के प्रेम में ऐसे बंध गए थे कि उससे अलग होने की कल्पना ही इनके लिए असहनीय थी । साला घर आता है तो तुलसी उसका यथोचित आदर-सम्मान करना अपना दायित्व समझते हैं । संभ्रम से चीज़ें लाने के लिए बाजार भी जाते हैं किंतु उनका मन दूसरी ही दिशा में सोचने लगता है कि यह साला मानो महाजन के समान है । महाजन जैसे ऋण वसूल करने के लिए घर आता है वैसे यह साला अपनी बहन को घर ले आने के लिए आया करता है । तुलसी का मन पत्नी के आकर्षण में बंध गया है । यह बात उनके मन में आते ही उसे ले जाने के लिए साला आया होगा, तुलसी का मन पत्नी के दर्शन और सामिप्य के लिए उद्वेलित हो उठता है तो तुरंत घर लौट आते हैं । इनके लौटने तक रत्नावली भाई के स्नेहपूर्ण आमंत्रण को ठुकरा न पाकर और तुलसी के आगमन की प्रतीक्षा भी न करके 'घर अंधकार' करके चली गई थी ।

## 27.4. तुलसी की विरहानुभूति

'तुलसीदास' काव्य के इस प्रसंग में निराला ने तुलसी की विरहानुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति की है । विप्रलम्ब श्रृंगार का वर्णन प्रस्तुत करनेवाला यह भाग आधुनिक हिन्दी की विरह काव्य धारा में महत्वपूर्ण स्थान रखता है । पत्नी के वियोग में तुलसी एकदम असहायक और अकेला पड़ जाते हैं । अपने अकेलेपन को

केवल अपने में अपितु घर के अंदर और बाहर भी देखते हैं । रत्नावली की अनुपस्थिति में सारा घर मानो सुनसान सा दिखाई देने लगा, कांतिहीन और श्री हीन सा प्रतीत होने लगा । निराला ने दाम्पत्य जीवन में आये इस अलगांव का प्रस्तुत छंद में हृदय वर्णन किया है -

**देखा, वह नहीं प्रिया, जीवन ;**
**नत नयन भवन, विषण्ण आँगन**
**आवरण शून्य वे बिना वरण-मधुरा के**
**अपहृत श्री, सुख स्नेह की सद्य ;**
**निःसुरभि, हंत हेमंत पद्य !**
**नैतिक-नीरस, निष्प्रीति, छद्म ज्यों पाते ।**

यहाँ हर शब्द का प्रयोग कवि ने बड़े सार्थक ढंग से किया है जो कि रत्नावली के वियोग से तुलसी के जीवन में आई अपूरणीय क्षति की ओर इंगित करता है ।

प्रेमी को पागल की संज्ञा से विभूषित करने कीपरंपरा शुरु से ही है । प्रेम की तीव्रता जब पराकाष्ठां पर पहुँच जाती है तो प्रेमीजन जगत की मान-मर्यादा की सीमाओं का उल्लंघन करके अपने प्रेमी का सामीप्य पाने के लिए तरसते हैं । तुलसी भी पत्नी के रूप-सौंदर्य एवं प्रेम से इतने प्रभावित हुए हैं कि उसके सामीप्य के बिना रहना उनसे संभव नहीं हो पाता है । प्रस्तुत संदर्भ में कवि प्रेम के संवेग को अत्यंत प्रभावकारी सिद्ध करते हुए तुलसी को ससुराल की ओर 'कुल-मान ध्यान श्लथ स्नेह-दान सक्षम' भाव से प्रस्थान करा देते हैं ।

ससुराल के रास्ते पर तुलसी का विरही मन प्रकृति के व्यापारों से उद्दीप्त होता है । निराला ने तुलसी के मन के अदम्य उत्साह और आकांक्षाओं को प्रकृति के व्यापारों से स्पंदित दिखाया है । झूमती लताओं, कुहर कुहर करनेवाली कोयलों, बहती ह खिलती धूप, चरती गायों और गोपालकों को देखकर तुलसी च

मन उल्लास और आनंद की अनुभूति से विभोर हो गया । उनका मन सहसा यमुना तट, कृष्ण और उसके सखाओं की स्मृति में बहने लगा । तुलसीदास इस प्रकार प्रकृति से अपूर्व चेतना ग्रीहण करते हुए अपने ससुराल पहुँचते हैं ।

## 27.5. ससुराल में तुलसी

तुलसी के जीवन को अप्रत्याशित मोड देने वाली घटना ससुराल में घटती है जिसने तुलसी को लोकवाद्य बनाया । राग से विराग की ओर तुलसी का गमन ससुराल के प्रांगण में शुरु होता है ।

पत्नी के प्रति तीव्र आसक्त होकर तुलसी ससुराल पहुँचे तो ससुराल के सभी सदस्यों ने उनका हार्दिक स्वागत तो किया किंतु गाँववालों ने तुलसी के पत्नी-व्यामोह की आलोचना की पत्नी के पीछे आए हुए तुलसी का उपहास किया । भाभी ने भी 'यह पहचान रतन' की कहकर तुलसी के प्रेम का व्यंग्य किया ।

रत्नावली अत्यंत संवेदनशील स्त्री है । इन व्यंग्यों से वह तिलमिला उठी । सोचने लगी कि पति के इस व्यवहार से उसे सिर झुकाना पड़ा । इन व्यंग्यों का रत्नावली पर क्या प्रभाव हुआ, इसका निराला ने सजीव चित्रण किया है -

**'जल गये व्यंग्य से सकल अंग,**
**चमकी चल-दृग ज्वाला तरंग,**
**पति की इस गति गति से मर कर**
**उर की उर में ज्यों ताप-क्षर**
**रह गई सुरभि की म्लान-अधर वर माला**

मायके में सुख से कुछ दिन बिताने के लिए रत्नावली आई थी किंतु पति के व्यवहार से उसका सारा संतोष एकदम उप्प पड़ गया । पति का यों पीछा करके आना रत्नावली के लिए अत्यंत क्षोभ का विषय था । वासना के वश में आकर पति ने लोक लज्जा

की परवाह तक नहीं की । रत्नावली चिंतित है कि इस विषय-पंक से अपने पति का उद्धार कैसे हो । इसलिए वह पुरुषोत्तम से अनुनय करती है कि -

**'रखो, मर्यादा पुरुषोत्तम !**
**लाज का आज भूषण, अक्लम, नारीका ;**
**खींचता छोर, यह कौन और**
**पैठा उनमें जो अधर चौर ?**
**खुलता अब-अंचल, नाथ पौर साडी का ?**

ग्रामवासियों के सामने उसका चीर हरण जो हो रहा है, उसकी रक्षा करने के लिए रत्नावली राम से प्रार्थना करती है । लोक के सामने लज्जित होना नारी के लिए अकल्पनीय और अकथनीय संकट है । इस संकट को रत्नावली अंदर से भोग रही है ।

शयन कक्षा में भी तुलसी प्रियतमा के सौंदर्य की आराधना में तल्लीन थे । उनका मन माधुर्य के सागर में हिलोरें ले रहा था । कवि के शब्दों में -

**'लख लख प्रियतम - मुख पूर्ण इन्दु**
**लहराया जो उर मधुर सिंधु'**

किन्तु रत्नावली का मन चिंतित था, विक्षुब्ध था, पति के सानिध्य सुख का आनंद नहीं ले पा रहा था । एक ही शयन कक्ष में सोई हुई ये आत्माएँ विपरीत दशा में सोच रही थीं । रत्नावली की मनोदशा का कवि ने 'विपरीत, ज्वार' कहकर संकेत किया है । तुलसीदास का मन पत्नी के रूप सौंदर्य को निहारकर मोर की भाँति नाचने लगता है । रूप मदिरा के नशे में चूर-चूर तुलसीदास पत्नी के बाहरी रूप से जितना आकृष्ट हैं, उसके अंतर को समझने में पूर्ण रूप से विफल हुए हैं । रत्नावली भी एकटक अपने पति को निहार रही है ; किंतु इनकी आँखों में मादकता नहीं थी, ये आँखे निस्तेज थीं, आकाश की शून्यता इन आँखों में बसी हुई थी, उसका हृदय भावविहीन था । निसंबल, आश्रयहीन

जोगीनी के जैसे रत्नावली दिखाई दे रही थी, किंतु उसके चेहरे पर एक ज्योति की चमक थी ।

## 27.6. राग से विराग और अज्ञान से ज्ञान की ओर

'तुलसीदास' काव्य की नायिका रत्नावली को तुलसी के भटके लक्ष्यहीन जीवन को लक्ष्य दिखाने का श्रेय है । निराला ने इस शक्ति स्वरूपिणी नारी को एक अबला मानते हुए भी उसे अचपल (स्थिर रहनेवाली), चपला (बिजली), कमला (लक्ष्मी) और अमला (सरस्वती) के रूप में देखा है । रत्नावली जो कि पति के व्यवहार से खिन्न थी, अब अत्यंत स्पष्ट शब्दों में उसे धिक्कारने लगी, आलोचना करने लगी । तुलसी के जीवन में कायापलट लानेवाला यह प्रसंग नारी चेतना की अनंत शक्ति का रेखांकन करता है । रत्नावली ने कहा -

**'धिक ! धाए तुम यों अनाहत,**
**धो दिया श्रेष्ठ कुल-धर्म धृत,**
**राम के नहीं, काम के सूत कहलाए !**
**हो बिके जहाँ तुम बिना दाम,**
**वह नहीं और कुछ-हाड चाम !**
**कैसी शिक्षा, कैसे विराम पर आए ।'**

तुम ने बिना बुलाए अथिति के रूप में आकर अपने श्रेष्ठ वंश की मर्यादा का भंग किया है । वासना से संचालित तुम्हारे इस व्यवहार का धिक्कार है । राम के नहीं अपितु काम के दास हो तुम ! हाड-माँस के इस शरीर के मोह में पड़कर तुम ने अपने को गिरा लिया है । ज्ञान, विवेक एवं पवित्र संस्कारों से हाथ धोकर, शिक्षा से ऊर्ध्वलोक की ओर न जाकर तुम एक ऐसे स्थान पर आए हो जिसके बारे में कल्पना तक नहीं की जा सकती है । काम वासना ने तुम्हें अंधकार में ढकेल दिया है ।

तुलसीदास अज्ञान के अंधकार और माया के आवरण में ऐसे हुए थे कि वहाँ से छुटकारा पाकर बाहर आने के लिए

रत्नावली जैसी ज्ञान-शक्ति की आवश्यकता थी । तुलसी की चेतना पर रत्नावली के उपरोक्त शब्दों ने ऐसा आघात किया कि उसके व्यक्ति में चमत्कार के रूप में कायापलट हुआ । सुषुप्रावस्था में स्थित उनके संस्कार ऐसे जाग उठे कि उसके व्यक्तित्व के जागृत स्तर पर जो कामवासना घेरि हुई थी वह जलकर राख हो गई । फलतः तुलसी ने अपनी चारो ओर सत्य का प्रभा मंडल देखा, ज्ञान वह' शब्द 'छूटा जग का जो रहा ध्यान, जडिमा को देखा । द्वारा निराला कहते हैं कि कुछ क्षण पूर्व जो जड़ता उसके व्यक्तित्व पर छायी हुई थी, वह एकदम दूर चली गई । अबतक रत्नावली के हाडमांसवाले शरीर के प्रति तुलसी का आकर्षण था, मगर अब उसमें एक अलौकिक भाव और अनंत आभा को उन्होंने देखा वह अब मात्र रत्नावली नहीं किंतु साक्षात सरस्वती दिखाई दे रही थी -

**देखा शारदा नील वसना**
**है सम्मुख स्वयं सृष्टि-रसना**
**जीवन-समीर-शुचि निःश्वसना वरदात्री'**

तुलसी ने रत्नावली के मुखमंडल पर एक अलौकिक तेज को देखा । फलतः तुलसी के व्यक्तित्व पर छाया हुआ अज्ञान दूर हुआ, ज्ञान का आलोक जगमगा उठा, उसकी दृष्टि ऊर्ध्वगामी हुई । आकाश की असीमता में उसका मन विचरने लगा, चेतना के अनन्य लोक में मन संचार करने लगा तुलसी का मन ब्रह्मानंद में ऐसा लीन हो गया कि वहाँ केवल 'आनंद रहा, मिट गए द्वंद्व, बंधन सब ।'

तुलसी की चेतना अब लौकिक जगत से बिलकुल कटकर ब्रह्मानूभूति में लीन हुई, उनका भावकोष खुल गया था, अभिव्यक्ति उन्हें अनिवार्य बन गई थी । तुलसी को अबतक अपनी क्षमता और ज्ञान का बोध नहीं था । उनकी पूर्व दशा और वर्तमान दशा का अंतर निराला ने कली में बंध सुगध और विकसित पुष्प की सुगंध के रूप में देखा है :

'जिस कलिका में कवि रहा बंध' और
'खोलती मृदुल दल' बंध सकल
गुदगुदा विपुल धारा अविचल

वह चली सुरभि की ज्यों उत्कल, निःशूला' - पंक्तियों में कवि की चेतना की ऊर्ध्वमुखी यात्रा की ओर संकेत किया गया है । जैसे-जैसे तुलसी ज्ञान मंडल में गए उनकी सृजनधर्मिता बल पलडती गई जगत के व्यापारों को देखने का दृष्टिकोण ही बदल गया । भवबन्धन में लिपटे लोगों का उद्धार करने, आसुरी भावनाओं के चेगुल में तडपती जनता को उनसे मुक्त करने को तुलसी की वाणी प्रवृत्त हुई । तुलसी के जीवन में प्रभात आया है, यह प्रभात क्या आया, राष्ट्रजीवन में भी नई चेतना, नया उत्साह आया है । आक्रमणों से झर्झरित जीवन को तुलसी की चेतनायुक्त वाणी संजीवनी साबित हुई है । तुलसी को पूर्वांचल का सूर्य कहकर निराला ने उनके प्रति असीमश्रद्धा प्रकट की है और उनके ओजस्वी स्वर में भारत के सांस्कृतिक जीवन के पुनरुत्थान की अनंत संभावनाओं को देखा है । राम-रावण के युद्ध में राम की विजय को निश्चित माना है । छोटे-छोटे गुटों व संप्रदायों के कटघरे में स्थित लोगों को मुक्त हवा में लाने में तुलसी में वह अद्‌भुत शक्ति है जिसके सहारे सारे भारत को नये आलोक में ले जा सके । भारत पर तम का साम्राज्य था जिसे आमर्ज्य समझा गया था । मगर तुलसी उस तम को दूर करके प्रकाश का राज्य स्थापित करने में क्रियाशील हो गए । इस प्रकार तुलसीदास को राग से विराग, लौकिक से आध्यात्म की ओर ले जाकर उन्हें त्य ज्ञान और उच्च मूल्यों का चिंतन करने के लिए पत्नी रत्नावली कारण बनी जिसके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हुए तुलसी कहते हैं - 'तुमने मुझे ज्ञान का वरदान दिया है माया-मोह से उभारा है, प्रकाश का ज्योतिपुंज दिखाया हैं, अब मैं निवृत्ति मार्ग को अपना रहा हूँ और संसारिक बंधनों से मुक्त होकर चेतनालोक में प्रवेश कर रहा हूँ ।' इतना कह चुकने के बाद ज्योतिपुंज सूर्य

की भाँति संसार का अंधकार दूर करने के लिए तुलसीदास ज्ञान के लोक में प्रविष्ट हुए ।

जिस प्रकार तुलसीदास पत्नी की रूपाराधना में तल्लीन थे उसी प्रकार मध्ययुगीन भारतीय जनमानस अपनी अस्मिता को खोकर विदेशी संस्कृति के प्रभाव में आ गया था, विलास एवं भोग के दलदल में फँस गया था । रत्नावली के एक धिक्कार ने तुलसी के संवेदनशील हृदय को आत्मशोध करने को मजबूर किया ठीक वैसे ही तुलसी के 'मानस' ने अज्ञान के अंधकार में और भोग-विलास में मग्न जनता को जगाया तथा सत्य, शील एवं सौंदर्य के धनी रामचंद्र के व्यक्तित्व और राजशासन के आदर्श को प्रस्तुत करके युग को नई गति दी । प्रस्तुत काव्य का समापन तुलसी के घर से बिदा होने के प्रसंग से हुआ है जो कि उपरोक्त अंश का आभास स्पष्ट रूप से देता है । इस दृष्टि से देखा जाय तो 'तुलसीदास' काव्य कथात्मककृति न होकर एक उद्‌बोधन काव्य है । जागृति का शंखनाद करनेवाला राष्ट्रीय-काव्य है । प्रस्तुत काव्य में ऐहीक प्रेम का विस्तार भगवत्प्रेम और राष्ट्र प्रेम की ओर हुआ है । निराला ने रत्नावली में उदात्त भाव, उदात्त लक्ष्य को देखा है, भारतीय नारी के तमाम आदर्शों की जीवंत प्रतिमा के रूप में रत्नावली का चरित्रांकन किया है ।

## 27.7. तुलसीदास का संदेश

रस-योजना के इस विवेचन के बाद हम अब यहाँ, इसी संदर्भ में संदेश एवं उद्देश्य की चर्चा भी कर लेना चाहते हैं । क्योंकि, वास्तव में आज 'रस' का महत्व इन्हीं दो तत्वों को प्राप्त हो गया है । भिन्न शब्द होते हुए भी ये दोनों 'जल-हिम' के समान 'एक तत्व की ही प्रधानता रखते हैं ।

काव्य का उद्देश्य भारतीय संस्कृति की चेतना के ह्रास का चित्रण कर पुनरुत्थान का सन्देश प्रचारित करना है । ह्रासोन्मुखी चेतना का यहां कवि ने काफी लम्बा-चौड़ा एवं व्यापक चित्रण

किया है । उसका ब्यौरा प्रस्तुत करना हमारा मन्तव्य नहीं । वास्तव में उसका सार-तत्व रत्नावली के इस कथन में पूर्णतया ध्वनित होता हुआ सुना जा सकता है -

**''धिक ! धाए तुम यों अनाहूत,**
**धो दिया श्रेष्ठ कुल-धर्म धूत,**
**राम के नहीं, काम के सूत कहलाए !**
**हो बिके जहाँ तुम बिना दाम,**
**वह नहीं और कुछ हाड़, चाम !**
**कैसी शिक्षा, कैसे विराम पर आए ।''**

इस स्थिति के चित्रण के बाद कवि ने तुलसीदास की चेतना का उन्नयन किया है । पर वह उन्नयन अकर्मण्यता का प्रतीक नहीं, कर्मण्यता का द्योतक है, पूर्णता आस्थावादी है । वह है 'सत्य के मिहिर द्वार' के उद्घाटन का प्राणपण प्रयत्न, जो काव्य के अंत में जाकर प्रतिफलित हुआ है । वही कवि का या 'तुलसीदास' का सन्देश भी है । कवि निराला ने अपने इस सोद्देश्य संदेश को स्वयं वैतालिक बन कर मुखर किया है -

**''जागो, जागो आया प्रभात,**
**बीती वह, बीती अन्ध रात,**
**झरता भर ज्यतिर्मय प्रपात पूर्वांचल**
**बाँधी बाँधी, किरणें चेतन,**
**तेजस्वी हे, तमजिज्जीवन ;**
**आती भारत की ज्योतिर्धन महिमाबल ! ''**

चेतन के बाह्य पर्यावरण का ही नहीं, बल्कि आंतरिक अवगुण्ठनों का उद्घाटन भी कवि का कथ्य, संवेद्य एवं प्रतिपाद्य आदि सभी कुछ है । वह बाह्य परिप्रेक्ष्य के समान अंतश्चेतना को भी 'सत्य' के दर्शन करा कर 'चित्' या 'चिति' की स्थिति में 'आनन्द' के मिहिर-द्वार तक ले जाना चाहता है । कवि के वेदान्ती अद्वैतवाद के अनुसार, साँख्य-दर्शन या विकासवाद के अनुसार मानवतावाद की यही गति एवं गत्यात्मक स्थिति कवि का अभिप्रेत

है । यही संस्कृति का भी चरम सत्य एवं रूप है, जो अनादि होते हुए भी चिरंतन एवं शाश्वत है । यही 'सत्त्व-शान्त' भी है । 'तम के अमार्ज्य' तारों का भेदन कर उसी 'विश्वाश्रय-महिमाधर' स्थिति में शिव या आनन्द-लोक में कवि मानव-चेतना को ऊर्ध्व-गमित करना चाहता है ।

## 27.8. तुलसीदास काव्य में रस

'तुलसीदास' काव्य में करुण, श्रृंगार और शांत रस की सुन्दर अभिव्यंजना हुई है । 'तुलसीदास' काव्य विषाद से आरंभ होकर आनंद की अनुभूति में समापन हुआ है । देश की तत्कालीन दुर्दशा करुण रस का आलंबन है जो कि एक समूची जाति की दयनीय अवस्था के प्रति सहानुभूति को जागृत करने में सफल हुई है । तुलसी के प्रेम में संयोग और वियोग की उत्कर्षस्थिति को देख सकते हैं । इस काव्य के विरहानुभूति संबंधी छंद अपने में बहुत ही मार्मिक एवं महत्वपूर्ण हैं जो कि आधुनिक हिन्दी प्रेम काव्य में उल्लेख योग्य हैं । काव्य का समापन शांत रस की उद्‌भावना के अनुकूल है । काव्य का विकास राग से विराग की ओर है । विरोग की इस अवस्था में न मन की उद्विग्नता को देखते हैं न उथल-पुथल कर देनेवाले भावों के दर्शन करते हैं । तुलसी के चित को चंचल करनेवाली माया का नाश होते ही वासना रुपी पक्षी के पंख ज्ञान रूपी प्रवर सूर्य की ज्वाला में जैसे ही जल गए तुलसी शुद्ध सोने की भाँति एक दूसरे ही रूप में अपने को पाए । निर्वेद भाव ने तुलसी के समग्र व्यक्तित्व को ऐसा छा लिया कि वे तपस्वी के जैसे सांसारिक बंधनों से किनारे हुए । ध्यान देने की बात यह है कि 'तुलसीदास' काव्य का नायक जीवन संघर्ष से मुँह मोड़कर पलायन नहीं करता है । अपितु जीवन को अर्थवत्ता देने, उसे उदात्त बनने और उसे संकल्प शक्ति से दीक्षित कराने के लिए प्रवृत्त होता है । शांत जीवन और उदात्त चिंतन, सत्य, प्रकाश अमृततत्व की ओर मानव को ले जाना प्रस्तुत काव्य का महान

लक्ष्य रहा है । संक्षेप में तुलसीदास काव्य में करुण, श्रृंगार और शांत रस की मार्मिक अभिव्यक्ति को देख सकते हैं ।

## 27.9. खंडकाव्य : तुलसीदास

'तुलसीदास' काव्य को किस विधा के अंतर्गत रखा जाय, इस संबंध में आलोचकों में मतभेद हैं ।

'तुलसीदास' के रचयिता निरालाजी की प्रतिभा निश्चित रूप से असंदिग्ध है । महाकाव्य की रचना करने की अपूर्व सामर्थ्य उनमें अवश्य थी । किंतु उन्होंने महाकाव्य नहीं लिखा । आलोचकों ने 'तुलसीदास' में महाकाव्य की संभावनाएँ देखी हैं और इसे महाकाव्यात्मक अथवा 'एपिकल' काव्य कहा है । हाँ, 'तुलसीदास' में महाकाव्य की वस्तु है किंतु उसका निर्वाह और विकास महाकाव्य के कैनवास पर नहीं हुआ है और समग्र जीवन का चित्रांकन भी यहाँ नहीं हुआ है । महाकाव्य की भव्यता और उसके योग्य अभिव्यजना शैली का निर्वाह भी यहाँ नहीं हुआ है । आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री ने 'तुलसीदास' को 'कामायनी' से भी अधिक सफल काव्य कहा है - 'स्वल्प परिधि में ही कल्पनाओं की मांसलता, विचारों की प्रौढ़ता द्वंद्वात्मक भावनाओं की नाटकीय उच्चता तथा कलात्मक कसावट की दृष्टि से यह 'कामायनी' से अधिक सफल काव्य है ।' इस प्रकार 'तुलसीदास' काव्य को कामायनी से भी महत्वपूर्ण काव्य सिद्ध करने का प्रयत्न करना 'कामायनी' के प्रति-अन्याय होगा । 'कामायनी' इस शताब्दी का एक महत्वपूर्ण महाकाव्य है जिसमें प्रसादजी ने अपने युग को स्वर दिया है, मानव इतिहास का मंथन किया है, इसकी शैली अत्यंत गंभीर है जबकि 'तुलसीदास' काव्य मध्ययुगीन भारत के इतिहास एवं सांस्कृतिक अधःपतन को सामाजिक जीवन में भी देखनेव ला कवि आत्मशोध करने के लिए प्रेरणा देता है । इसमें कवि को बड़ी सफलता भी मिली है । इस दृष्टि से देखा जाय तो 'तुलसीदास' काव्य को महाकाव्य कहना संगत नहीं लगता है । 'तुलसीदास' एक सफल खंडकाव्य है । कुछ आलोचक 'तुलसीदास' को न

महाकाव्य मानते हैं न खंडकाव्य, अपितु 'क्षणबोध रूपक' और 'भावात्मक चेतना का काव्य' मानते हैं । 'तुलसीदास' में देश वासियों के लिए प्रेरण और उत्थान का संदेश है । इसे एक लंबी कविता भी मानते हैं । डॉ.प्रेम शंकर के अनुसार 'तुलसीदास' निराला की सांस्कृतिक दृष्टि और स्वच्छंदतावादी चेतना से निर्मित काव्य है । इस सांस्कृतिक दृष्टि में उनकी राष्ट्रीय भावना का भी योग है जो केवल वक्तव्यों पर आधारित न होकर क़ाफ़ी गहरे उतरती है और बौद्धिक हुआ करती है । इसे स्वच्छंदतावादी काव्य की राष्ट्रीय चेतना के रूप में समझना चाहिए जिसमें कवि अपने देश को भौगोलिक इकाइयों से बाहर ले जाकर बहत्तर मानव जीवन से जोडने का उपक्रम करते हैं ।'

## 27.10. तुलसीदास की भाषा

मुक्तछंद के प्रवर्तक के रूप में निराला का योगदान कम महत्वपूर्ण नहीं है । इस संबंध में आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी का कहना है कि 'मुक्त छंद में निरालाजी ने एक ओर जुही कली' जैसी कोमल कल्पना विशिष्ट रचना दी है वहीं 'जागो फिर एक बार' जैसे उदात्त वीररस का काव्य भी दिया है । इतना हम अवश्य कहेंगे कि उनके मुक्त काव्य में स्वच्छंद कल्पना का अति स्वाभाविक प्रवाह है । काव्य का चिर दिन से चले आते हुए छन्दबंध से छूटना एक स्मरणीय घटना है । इस क्षेत्र के अधिकारी निरालाजी ही हैं ।' काव्य को छंद के बंधन का निराकरण करते हुए 'परिमल' की भूमिका में निराला ने लिखा है कि मुकत छन्द तो वह है जो छन्द की भूमि में रहकर भी मुक्त है । उसमें कोई बंधन नहीं, उसका समर्थक उसका प्रवाह ही है । वही उसे छन्द सिद्ध करता है ।' इस प्रकार हम देखते हैं कि निराला के गीत छन्दों से मुक्त होते हुए भी लय के बंध में इस प्रकार बंधे हुए हैं कि इनमें ओज, रा, गंध, स्पर्श और रूप अपने आप बड़े ही सहज रूप में अभिव्यक्त होते हैं । निराला के गीतों तथा लंबी कविताओं की भाषा में भी हम उपरोक्त अंशों को देख सकते हैं ।

जहाँ तक भाषा का सवाल है निराला की काव्य भाषा संस्कृत के संस्कारों से मुक्त है । संस्कृत के शब्दों का निराला इतने सार्थक प्रयोग करते हैं कि एक-एक शब्द में अनेकार्थ उद्‌घाटित होते हैं ; ये अभिधार्थ की सीमा पार करके लक्षणा और व्यंजना के आलोक में अपने प्रयोग की परिणति को देखते हैं । अलंकार भी शब्द-बंध और शब्दात्विति में इस प्रकार मुखरित होते हैं कि निराला की शब्द-संपदा और वाक् शक्ति पर दंग रह जाना पड़ता है । वाजपेयजी लिखते हैं कि मुक्त छंद के अतिरिक्त उन्होंने हिंदी पद विन्यास को भी अधिक प्रौढ़ तथा प्रशस्त बनाने का सफल प्रयास किया । अत्यंत सार्थ शब्द सृष्टि द्वारा निरालाजी ने हिन्दी को अभिव्यक्ति की विशेष शक्ति प्रदान की है । संतीतज्ञ होने के कारण शब्द-संगीत परखने और व्यवहार में लाने में वे आधुनिक हिन्दी के दिशा नायक हैं । अनुप्रास के वे आचार्य हैं इसमें परिप्रेय में देखेंगे तो 'तुलसीदास' काव्य की भाषा और अलंकार योजना हिंदी की अभिव्यक्ति सामर्थ्य को रेखांकित करती है ।

'तुलसीदास' काव्य एक प्रबुद्ध एवं असाधारण कवि प्रतिभा की श्रेष्ठ रचना है जिसमें कवि ने भाषा, भाव और कल्पना का सुंदर समायोजन किया है । इसके छंद विधान के बारे में कहा गया है कि यहाँ कोई 'शास्त्रीय योजना' नहीं है । अपितु डॉ.भगीरथ मिश्र इसको 'पद्धटिका' छंद में लिखा काव्य मनते हैं और कहते हैं 'तुलसीदास' की भाषा संस्कृत बहुत और क्लिष्ट भी है । उसमें ओज है, प्रवाह है निराला का शब्द विप्यास अपने ढंग का अनोखा था । शब्दों का परंपरागत अर्थ तोड़कर उन्होंने अपने अर्थ में शब्दों का उपयोग किया और यही कारण है कि प्रबुद्ध और विचक्षण वायक भी उनके काव्य का अर्थ तत्काल नहीं समझ सकता ।

.'तुलसीदास' में प्रकृति वर्णन और रूपकों की सृष्टि प्रचुर मात्रा में है । प्रकृति वर्णन के आधार पर ही निराला जी तुलसीदास का मानसिक और संस्कृतियों का आपसी संघर्ष चित्रित

करते जाते हैं । 'तुलसीदास' निरालाजी की उदात्त चिंतनप्रधान बुद्धिवादी काव्यकृति है ।'

तुलसीदास 'बुद्धिवादी' रचना है, इसलिए ही यहाँ की विचार संपदा एवं यहाँ के अभिव्यक्ति कौशल से साक्षात्कार करने के लिए प्रबुद्ध मानसिकता की आवश्यकता है ।

'तुलसीदास' एक गंभीर रचना है जिसकी प्रासंगिकता तो भारत के संदर्भ में प्रश्नातीत है ।

आधुनिक हिन्दी के महत्वपूर्ण काव्यग्रंथों में निराला का प्रस्तुत काव्य 'तुलसीदास' निश्चितरूप से अपना महत्व रखता है और निराला की अमर कृतियों में इस काव्य का अक्षुण्ण स्थान है । आलोचकों ने निराला को 'आधुनिक कबीर' कहा है । जैसे कबीर के व्यक्तित्व के अनेक आयाम थे, वैसे निराला के व्यक्तित्व के भी अनेक आयाम हैं । 'उन्हें कई बार बकीर मुद्रा का कवि कहकर संतोष कर लिया जाता है । कबीर एक साथ विपरित भूमियों पर यात्रा करनेवाले कवि हैं । एक उनका वह विद्रोही स्वर है, जहाँ वे समाज पर तीखे आक्रमण करते हैं । दूसरी ओर उनकी उपदेश वृत्ति है, जहाँ वे नीति का प्रचार करते दिखाई देते हैं, तीसरे उनका वह प्रार्थना भाव है जब वे समर्पण के गीत गाते हैं और अंत में उनके काव्य के लिए जिस वैविध्य की बात कही जाती है उसके विषय में यह जान लेना होगा कि विभिन्न दिशाओं में जाते हुए इन सबका संयोजन अपने रचनात्मक विद्रोह की क्षमता में करते हैं ।'

कबीर और निराला के कृतित्व में अद्‌भुत समानताएँ देखी जा सकती हैं । दोनों अपने अपने समाज के प्रति प्रतिबद्ध रचनाकार थे, दोनों भक्त थे, रहस्यवादी थे । कबीर और निराला हिन्दी के अनन्य गीतकार थे, वे अपने जीवन संघर्षों में ऐसे तल्लीन थे कि महाकाव्य की रचना करने का अवसर ही इन्हें नहीं मिला । कबीरवाणी और निराला की कविता हिन्दी की अपनी उपलब्धियाँ हैं और दोनों सबसे बढ़कर महान मानवतावादी थे । कबीर मध्ययगु

के मसीहा थे तो निराला आधुनिक युग के महाप्राण । निरालाजी बीसवीं शताब्दी के भारतीय साहित्यकारों में शिखर पुरुष हैं जिनकी साहित्य साधना ने इस युग को अत्यंत आत्मीयता एवं प्रामाणिकता से अभिव्यक्त किया है । डॉ.सुंदरलाल कथूरिया के शब्दों में निस्संदेह निराला की समग्र काव्य साधना एक सच्चे 'भारतीय कवि की ऐसी शब्द साधना है कि जिसमें सत्यम् शिवम् और सुन्दरम् के समन्वय से भारतीय आत्मा साकार हो उठी है, भारतीय संस्कृति वाणी पा गई है और भारतीय दर्शन तथा जीवन मूल्य अपनी पूरी भव्यता के साथ उजागर हो उठे हैं ।'

## 27.11. बोध प्रश्न

1. खण्डकाव्य के तत्वों के आधार पर तुलसीदास की विवेचना कीजिए ।
2. निराला-तुलसीदास काव्य के माध्यंम का संदेश दिया है - स्पष्ट कीजिए ।

## NOTES

## इकाई अट्ठाईस : तुलसीदास : छायावादी परिप्रेक्ष्य एवं युग चेतना

### इकाई की रूपरेखा


28.0. उद्देश्य

28.1. प्रस्तावना

28.2. तुलसीदास : छायावादी परिप्रेक्ष्य एवं युग चेतना

- 28.2.1. व्यक्तिवादी प्रधानता या आत्मानुभूतियां
- 28.2.2. प्रकृति-चित्रण
- 28.2.3. रहस्यवादी चेतना
- 28.2.4. नारी-सौन्दर्य एवं प्रेम-चित्रण
- 28.2.5. स्वच्छन्दतावादी
- 28.2.6. रहस्य-भावना और स्वतंत्रता-प्रेम
- 28.2.7. निराशा एवं वेदना
- 28.2.8. मानवतावाद
- 28.2.9. आदर्शवाद
- 28.2.10. प्रतीकात्मकता

28.3. शिल्प-विधान की दृष्टि से

28.4. युगीन-चेतना

- 28.4.1. निम्न पीड़ित वर्ग के प्रति सहानुभूति

28.4.2. पारिवारिक परिवेश एवं समाज

28.4.3. राष्ट्रीयता के उन्नयन की चेतना

28.4.4. नारी-संबंधी सामयिक दृष्टिकोण

28.5. बोध प्रश्न

## 28.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने भारतीय परिवार तथा तुलसी की विरह संदेश, काव्य कला आदि के बारे में अध्ययन किया ।

## 28.1. प्रस्तावना

अब इस इकाई में छायावादी परिप्रेक्ष्य में तुलसीदास की विवेचना तथा प्रकृति चेतना निम्न वर्ग के प्रति सहानुभूति राष्ट्रीयता आदि के बारे में अध्ययन करेंगे ।

## 28.2. तुलसीदास : छायावादी परिप्रेक्ष्य एवं युग चेतना

छायावदी काव्य-धारा का प्रवर्तन 'द्विवेदी युग' की इति-वृत्तात्मकता का तम-भेदन करके हुआ था । इस प्रवर्तन के मूल में काव्य में आगई इतिवृत्तात्मकता के प्रति-विद्रोह का भाव तो था ही, अन्य अनेक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ भी थीं, रूढ़ियों के प्रति आक्रोश, मुक्ता उड़ान की कामना, शोषणजन्य स्थितियों का विरोध, नारी-पुरुष-संबंधों में मुक्त-भाव-परिधियाँ, अंग्रेजी के रोमाण्टिसिज्म का प्रभाव, राष्ट्रीयता की भावना और स्वतंत्रता की तड़प, नव-दर्शनवाद का प्रभाव, आध्यात्मिक एवं ऊर्ध्वमुखी चेतनाएं, साँस्कृतिक एवं आर्थिक ह्रास तथा शोषण आदि विविध प्रवृत्तियों ने मिलकर छायावादी काव्य-धारा को नव-बोध प्रदान किया । हमारे विचार में छायावाद, वास्तव में उपरोक्त सभी प्रकार के भाव-बोधों की अभिव्यक्ति का माध्यम है । इस माध्यम को अपना कर एक ओर तो कवियों ने प्राकृतिक प्रतीकों का विधान कर युगचेतना को अभिव्यक्ति दी, सौन्दर्य की साधना की, जीवन की सौन्दर्य-विधायिनी प्रवृत्ति को संतुष्टि प्रदान की और दूसरी ओर इसे अध्यात्म-साधना का भी एक मार्ग बनाया । अध्यात्म-साधना का यह पक्ष रहस्यवादी काव्य-चेतना या धारा के रूप में परिणत हो गया, जबकि शेष सभी कुछ छायावाद ही कहलाया । इसका स्वरूप, परिवेश, भाव-बोध, छन्द-विधान, भाषायी शब्द योजना आदि सभी

कुछ नया था, इस कारण इस धारा को अनेक प्रकार की विरोधी प्रत्यालोचनाओं की छाया में ही पनपना-विकसना पड़ा । कुछ भी हो, यह एक उजागर तथ्य है कि इस छायावादी काव्य-परिवेश में समूचे युग की चेतना आने समग्र विविध रूपों में समाहित है । पर यह सब बाह्य स्थूल रूप में न होकर अंतर्मुखी सूक्ष्म चेतनाओं के रूप में ही हुआ । इसी कारण किसी को वहाँ अबूझता के दर्शन हुए तो किसी को पलायन के । किसी ने उसकी भाषा को जीवन से जुड़ी हुई न माना तो किसी ने उसके दर्शन एवं जीवन-दर्शन को प्रलाप बताया । पर इन सब बातों को व्यर्थ मानकर हम तो श्रीमती महादेवी वर्मा के इस कथन से पूर्ण सहमत हैं कि -

"सृष्टि के बाह्याकार पर इतना लिखा जा चुका था कि मनुष्य का हृदय अपनी अभिव्यक्ति के लिए रो उठा । स्वच्छन्द छन्द में चित्रित उन मानव-अनुभूतियों का नाम 'छाया' उपयुक्त ही था ।'

तात्पर्य यह है कि छायावादी काव्य-धारा पूर्णतया अंतर्मुखी रही । उसमें पूंजीवादी-सामांत-साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों के प्रति आक्रोश से लेकर व्यक्तिवादी स्वच्छन्द यौन-भावना आदि की सभी प्रवृत्तियां विद्यमान हैं । वह जीवन की सर्वांगीणता का काव्य है । निराला जी ने अपने काव्य 'तुलसीदास' की रचना पूर्णतया एवं समग्रतः छायावादी परिवेश में ही की है । छायावादी काव्यचेतना की सभी मूल वृत्तियों एवं प्रवृत्तियों के स्पष्टतः दर्शन हमें 'तुलसीदास' में होते हैं । छायावादी काव्यधारा की निम्नलिखित प्रमुख प्रवृत्तियाँ मानी गई है -

1. व्यक्तिवादी प्राधनता या आत्मानुभूतियां
2. प्रकृति-चित्रण
3. रहस्यवादी चेतना
4. नारी-सौन्दर्य एवं प्रेम-चित्रण
5. स्वच्छन्दतावाद
6. रहस्य-भावना और स्वतंत्रता

7. निराशा एवं वेदना
8. मानवतावाद
9. आदर्शवाद
10. प्रतीकात्मकता आदि ।

इनके अतिरिक्त रूढ़ि-बन्धनों का विरोध, कल्पना की अतिशयता, जिज्ञासा एवं विस्मय भाव, सचेतनता या सर्व चेतनता, गेयता, चित्रात्मकता आदि अन्य विविध प्रवृत्तियों एवं विशेषताओं के दर्शन भी वहां होते हैं । इनके सन्दर्भ में जब हम प्रस्तुत आलोच्य काव्य 'तुलसीदास' पर विचार करते हैं तो निम्न लिखित तथ्य हमारे सामने आते हैं -

## 28.2.1. व्यक्तिवादी प्रधानता

'तुलसीदास' काव्य की समूची चेतना ही अपने मूल रूप में व्यक्तिवादी है । केवल धारण की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि उसकी अभिव्यक्ति की दृष्टि से भी यहाँ व्यक्तिवाद एवं आत्मानुभूतियों को ही प्रश्रय मिला है । तुलसीदास की समग्र चेतना कवि निराला की अपनी ही अंतर्मुखी चेतना है । अतः यहाँ कोई विशेष उदाहरण न देकर हमारे विचार में 'तुलसीदास' के किसी भी पद्य को रखकर इस कथन की परीक्षा की जा सकती है । काव्य के प्रथम पद्य को ही ले लीजिये -

**''भारत के नभ का प्रभापूर्ण**
**शीतलच्छाया सांस्कृतिक सूर्य**
**अस्तमित आज रे - तमस्तूर्यदिङ् मण्डल ;**
**उर के आसन पर शिरस्त्राण**
**शासन करते हैं मुसलमान ;**
**है ऊर्मिल जल, निश्चलत्प्राण पर शतदल ।''**

यहाँ की व्यक्ति चेतना एवं वेदना को ही आकार मिला है । इसी प्रकार सांस्कृतिक सांझ-वर्णन, प्रकृति प्रेरणा और तुलसीदास के मनोन्नयन के संदर्भ में विरचित समस्त पद्य व्यक्ति-चेतना से पूर्णतया समन्वित हैं । तुलसीदास की अपनी पत्नी रत्नावली के

प्रति व्यक्त धारणाएँ भी वास्तव में कवि की अपनी पत्नी के प्रति व्यक्त धारणाएँ ही हैं ।

## 28.2.1. प्रकृति-चित्रण

छायावादी काव्य-धारा का मूल माध्यम ही प्रकृति-चित्रण है । अन्य कवियों के समान निराला जी ने भी 'तुलसीदास' काव्य में समस्त भावोन्मोचन के लिए प्रकृति को ही माध्यम बनाया है । प्रकृति के स्वतंत्रा चित्रित रूप भी यहां विशेष दर्शनीय है । कवि वास्तव में यहां प्रकृति की ही भावों की उन्नायिका मान कर चला है । प्रकृति से मुक्त चित्रण का एक उदाहरण देखिये -

**''मग में पिक-कुहरित डाल-डाल**
**है हरित विटप सब सुमन-माल,**
**हिलती लतिकाएं ताल-ताल पर सस्मित**
**पड़ता उन पर ज्योतिः प्रपात,**
**हैं चमक रहे सब कनक-गात ;**
**बहती मधु-नीर समीर ज्ञात, आलिंगित ।'**

प्रकृति-चित्रण में वास्तव में सौंदर्य-बोध की चेतना ही प्रमुख है । प्रकृति में छायावादी कवियों ने दो प्रकार से सौन्दर्य के दर्शन किये हैं - एक तो वहां उन्हें शिशु का भोलापन दिखाई दिया है, जबकि दूसरा नारी का अल्हड़ मुग्ध रूप । 'तुलसीदास' में यह दूसरी प्रकार का प्रकृतिजन्य सौन्दर्य बोध ही प्रमुख है । उन्होंने प्रकृति का आश्रय लेकर उसके समस्त सौन्दर्य को रत्नावली के अंग-सौष्ठव में समाहित कर दिया है । इस बोध का भी एक भावाविल चित्र देखिये -

**''यह श्री पावन, गृहिणी उदार,**
**गिरिवर उरोज, सरि पयोधार,**
**कर वन तरु, फैला निहारती देती,**
**सब जीवों पर है एक दृष्टि,**
**तृण-तृण पर उसकी सुधा-वृष्टि,**
**प्रेयसी, बदलती वसन सृष्टि नव लेती ।''**

अतः डॉ.देवराज का यह कथन पूर्ण सत्य है कि - "साहित्यिक दृष्टि से छायावादी कांव्य की मुख्य उपलब्धि हिन्दी-पाठकों में सौन्दर्य-दृष्टि का उन्मेष और प्रसार है ।" यह उन्मेष एवं प्रासार प्रकृति के माध्यम से ही हुआ है ।

## 28.2.3. रहस्यवादी चेतना

इस चेतना का मूल आधार प्रकृति के प्रति जिज्ञासा-भाव है । जब कवि प्रकृति-विकास के मूल में किसी अलग सत्ता के होने की बात मान बैठता है, तभी जिज्ञासाएँ जन्म लेती हैं और उनके शमन के प्रति सजग रहकर कवि अंत में उस सत्ता का तादात्म्य प्राप्त कर मिलन-सुख की अनुभूति से भर उठता है । सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर 'तुलसीदास' काव्य की समूची प्रक्रिया ही रहस्यवादी चेतना से समन्वित है । उसमें विद्यमान वेदान्ती अद्वैत-दर्शन इसका प्रमाण है । सूक्ष्य कथ्य की दृष्टि से यहाँ समस्त प्रयत्न उस रहस्य को ही पाने के प्रयत्न है जो चित्रकूट में प्रकृति दर्शन के समय तुलसीदास की अंतश्चेतना में आभासित होने लगते हैं -

**"तरु-तरु वीरुध्-वीरुध् तृण-तृण**
**जैसे क्यों हँसते मसृण-मसृण,**
**भर लेने को उर में, अथाह,**
**बाहों में फैलाया उछाह,**
**गिनते थे दिन, अब सफल-चाह पल रखकर ।"**

और तब कवि 'ज्ञानोन्मीलन' की स्थितियों का चित्रण करते हुए 'कलि में सौरभ ज्यों' तथा 'अपनी असीमत में अवसित प्राणार्शय' जैसे उक्तियाँ कहता है, तब भी उसके रहस्यवादी रूप के ही हमें दर्शन होते हैं ।

## 28.2.4. नारी-सौन्दर्य एवं प्रेक-चित्रण

छायावादी-स्वच्छन्दतावादी काव्य-चेतना में नारी के प्रति एक पूर्ण सम्मान का भाव व्यक्त हुआ है । वे लोग नारी को केवल उद्दीपक एवं भोग्या ही नहीं मानते, बल्कि कवि पंत के शब्दों में वह

'माँ ! सहचरी ! प्राण' आदि सभी कुछ है । जहाँ वह अपने भौतिक सौन्दर्य से हमारी वासनासिक्त आँखों को तृप्ति एवं सन्तुष्टि प्रदान करती है, वहाँ वह हमारी मुक्ति की विधायिनी भी है । उसका सौन्दर्य एवं प्रेम पहले मोह है, जैसा कि 'तुलसीदास' में प्रगट हुआ है -

**''उस क्षण, उस छाया के ऊपर,**
**नभ-तभ की-सी तारिका सुधर ;**
**आ पड़ी वृष्टि में, जीवन पर, सुन्दरतम**
**प्रेयसी, प्राण संगिनी, ..... ''**

किन्तु बाद में वही आत्मा के सौन्दर्य एवं मुक्ति का संदेश लेकर हमारे सामने आती है । कवि निराला को यहाँ यही बाद वाला रूप और उसके प्रति प्रेम ही काम्य है । तभी तो उन्होंने नारी का समन्वय कमला, अमला, भारती आदि अनेक रूपों से करके उसके रूप को और भी अधिक ग्राह्या बना दिया है । यहाँ नारी का अस्तित्व एवं व्यक्तित्व सर्वथा स्वतंत्र है और स्वतंत्र रूप में ही वह वास्तविक ग्राह्यता के गौरव की अधिकारिणी बन पाती है । इस प्रकार 'तुलसीदास' में निराला जी ने नारी प्रेम-सौन्दर्य का चित्रण स्वच्छन्द एवं कोमलतम तन्तुओं से किया है ।

## 28.2.5. स्वच्छन्दतावाद

स्वच्छन्दता छायावादी काव्य की मूल विधायक चेतना है । यह स्वच्छन्दता वर्ण्य-विषयों, भाव, कला, दर्शन, धर्म, समाज, शिल्प एवं कला-विधान आदि सभी दृष्टियों से अंकित की जा सकती है । रूढ़ियों से विहीनता या उनके प्रति विद्रोह का भाव ही वास्तव में स्वच्छन्दतावाद है । इसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के कारण ही छायांवादी काव्य में सौन्दर्य प्रेम, प्रकृति, रहस्यात्मकता आदि अन्यान्य सभी तत्व आये हैं । 'तुलसीदास' के समूचे परिवेश में इस स्वच्छन्द वृत्ति को देखा जा सकता है । कवि ने 'रस-विधान' तक में सामान्य शास्त्रीय नियमों का निर्वाह नहीं किया । विचार एवं भाषा में तो वे पूर्णतया उन्मुक्त है ही सही, छन्द आदि का भी

यहाँ कोई परम्परागत बन्धन नहीं । कवि ने चेतना एवं आत्मा की स्वच्छन्दता का भी समर्थन किया है ।

## 28.2.6. रहस्य-भावना और स्वतंत्रता प्रेम

विचित्र-सा लगने पर भी छायावादी काव्य-धारा में रहस्य-भावानाओं के साथ-सांथ स्वतंत्रता-प्रेम का भाव स्पष्टतः बिम्बित हुआ है । इस बिम्बन या अंकन को ही कुछ समीक्षकों ने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक साहित्य बंधनों एवं रूढ़ियों का उन्मेष भी कहा है । वास्तव में कवि अपने युग की स्थितियों से मुँह मोड़ भी तो नहीं सकता । वह कितना भी सूक्ष्म, अंतर्मुखी एवं रहस्यमय क्यों न हो जाय 'चिन्त्य नयन' में परिचित-सा आत्मीय भाव आ जाना स्वाभाविक है । इसे ही युग का प्रभाव कहा जाता है । कवि निराला ने भी 'तुलसीदास' में स्वतंत्रता के प्रति प्रेम एवं कर्त्तव्य-निर्वाह के लिए रहस्य-भावनाओं का आश्रय लिया है । उन्होंने यहाँ सभी प्रकार की रूढ़ियों का मुखर विरोध किया है । जब वे 'तिमिर पार' करने और 'सत्य' का 'मिहिर-द्वार' देखने की बात कहते हैं, तो वास्तव में वे स्वतंत्रता-प्रेम को ही स्थूल रूप में निभाते हैं । फिर जब वे कहते हैं -

**''लड़ना विरोध से द्वन्द्व-समर**
**रह सत्य-मार्ग पर स्थिर निर्भर**
**जाना, भिन्न भी देह, निज धर निःसंशय ।''**

तो परोक्ष रूप में वे स्वतंत्रता-प्रेम निबाहने की बात ही कहते हैं । यहाँ चेतना का समस्त संघर्ष भी वास्तव में 'मुक्ति' और 'स्वतंत्रता' के लिये किया जाने वाला संघर्ष है । 'मुक्ति' का संबंध रहस्य-भावना से, जब कि प्रत्यक्षतः संघर्ष को हम 'स्वतंत्रता' के लिए संघर्ष की संज्ञा दे सकते हैं ।

## 28.2.7. निराला एवं वेदना

छायावादी काव्य में युगानुरूप वेदना की विवृत्ति भी सर्वत्र देखी जा सकती है । करुणा, निराशा आदि भी इसी वेदना के ही

रूप हैं । डॉ.शिवदान सिंह चौहान के अनुसार - ''उनकी वाणी में मनुष्य की महिमा का उद्घोष है, रूढ़िग्रस्त समाज के बंधनों और मनुष्य के शोषण उत्पीड़न के विरुद्ध एक नैतिक और न्यायपरक भावना का मार्मिक प्रतिवाद है और समाज के अधिकार-वंचित प्राणियों के प्रति सहज करुणा और सहानुभूति की उदात्त भावना है, तो भी कहीं-कहीं घोर नैराश्य से भरा आत्मपीड़क चीत्कार भी है ..... ।'' निराला ज़ी के 'तुलसीदास' में भी स्पष्टतः निराशा, वेदना एवं करुणा का सहज गायन मिलता है । जब उनकी चेतना सोचती है -

**''सोचता कहाँ रे किधर कूल**
**बहता तरंग का प्रमुद फूल ?''**

तो निराला को ही अभिव्यक्ति मिलती है । सांस्कृतिक-सन्ध्या के चित्रण में वेदना-पीड़ा का भाव स्पष्टतः अंतःस्यूत है । और जब वे निम्नवर्ग की वेदना का गायन करने लगते हैं -

**''वे शेष-श्वास, पशु, मूक्-भाष ;**
**पाते प्रहार अब हताश्वास ; ''**

तो उनकी करुणा साकार हो उठती है । वास्तव में अत्मःकरुणा की उन्मुक्त सरणी यहाँ आद्यान्त विद्यमान है, पर निराशा का कवि ने 'ज्ञानोन्मीलन' कर परिहार कर दिया है ।

## 28.2.8. मानवतावाद

मानवतावाद की भावना तो निराला जी के दर्शन एवं जीवन-दर्शन की मूल कारयित्री भावना है । सर्वात्मंवाद, रामकृष्ण परमहंस का भावनात्मक वेदांत, विवेकानंद का प्रवृत्ति-मूलक वेदांती अद्वैतवाद, सांख्य-दर्शन, अरविंद, गाँधी, टैगोर आदि के प्रभाव को छायावाद ने पूर्णतया अंतश्चेतना में समाहित किया है । इस काव्य-धारा में मानवतावादी दृष्टिकोण अनेक प्रकार से, अनेक रूपों में अभिव्यक्त हुआ है । 'तुलसीदास' में निराला जी ने जिस चेतना का उन्नयन किया है, वह जितनी रहस्यमय और अंतर्मुखी है, उतनी,

ही विशुद्ध मानवीय भावना से भी समन्वित है । कवि जब सांस्कृतिक ह्लास का वर्णन कर, इस्लामी प्रभाव से दलित शूद्र वर्ग का वर्णन करता है, तो मानवतावादी दृष्टिकोण ही स्थूल रूप धारण का प्रगट होने लगता है -

**''चलते फिरते, पर निम्सहाय,**
**वे दीन, क्षीण कंकालकाय ;**
**आशा केवल जीवनोपाय उर-उर में ।''**

इस 'जीवनोपाय' के लिए ही सांस्कृतिक पुनरुत्थान एवं चेतना के पूर्ण उन्नयन की आवश्यकता है । यही मानवतावादी दृष्टिकोण 'तुलसीदास' काव्य की अंतिम प्रभावान्विति से प्रतिध्वनित होता है ।

## 28.2.9. आदर्शवाद

प्रत्यक्षतः आदर्श-साधना छायावादी काव्य की चेतना नहीं है, पर अंतर्मुखता के कारण भाव-साधना ही उसका लक्ष्य रहा है । अंतः प्रवृत्तियों को चित्रण एवं उन्नयन की प्रक्रिया भी मूलतः आदर्शवादी ही कही जाएगी । उनकी साधना 'सत्य' और 'सुन्दर' की साधना तो है ही सही, 'शिव' की भी है । 'सत्य' के 'सुन्दर' मार्ग पर चल कर 'शिव' की साधना आदर्श ही तो है । 'तुलसीदास' में कवि ने इसी प्रक्रिया का स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों रूपों में प्रदर्शन किया है । पहले भारतीय संस्कृति का ह्रास एवं इस्लाम संस्कृति का उन्मेष यह एक ऐतिहासिक सत्य है । इस सत्य को पाने के लिए उसने प्रकृति में 'सुन्दर' का ही आश्रय लिया है । संन्दर की साधना भी दिखाई है और अंत में उसी 'सुन्दर' से 'शिव' के आदर्श का उन्मेष दिखाया है जो कवि का पूर्ण काम्य है । उसे कवि ने सुन्दर के आवरण में ही यों प्रस्तुत किया है -

**''जागो, जागो आया प्रभात,**
**बीती वह, बीती अंध रात,**
**झरता भर ज्योतिर्मय प्रपाज पूर्वांचल ;**
**बाँधो बाँधो, किरणें चेतन,**

तेजस्वी, हे तमजिज्जीवन,
**आती भारत की ज्योतिर्धन महिमा बल ! ''**

हमारे विचार में इस 'प्रभात' के 'महिमा बल' 'ज्योतिर्धन' का उन्मेष ही 'तुलसीदास' काव्य का चिर सत्य आदर्श है ।

## 28.2.10. प्रतीकात्मकता या प्रतीकवाद

प्रतीकात्मकता या प्रतीकवाद का सीधा संबंध वास्तव में शिल्प-पक्ष से ही अधिक होता है । क्योंकि अंतर्मुखी काव्य में वर्ण्य-विषय की प्रभविष्णुता के लिए इनका विधान कुछ अनिवार्य-सा हो जाता है । छायावादी कवियों ने अक्सर प्रकृति के प्रतीकों को ही अपनाया है । दूसरे रहस्यवादी प्रवृत्तियों के उन्मेष के लिए तो प्रतीकों का विधान किया ही गया है, बाह्य स्थूल भावों के लिए भी अनिवार्य रूप में प्रतीकों का आश्रय लिया गया है । यहाँ 'तुलसीदास' में निराला जी ने भी प्रतीकों का पर्याप्त आश्रय लिया है । यहाँ 'सूर्य' भारतीय संस्कृति का प्रतीक है तो 'चन्द्र' इस्लामी संस्कृति का । 'मिमिर' अज्ञान का । 'सन्ध्या' ह्रासोन्मुखी प्रवृत्तियों की प्रतीक है तो 'भावरूप शब्दोच्छल' ऊर्ध्वगामी चेतना का । प्रतीक-विधान सम्बन्धी एक उदाहर देखिये -

**जागो, जागो आया प्रभात,**
**बीती वह, बीती अंध रात**
**झरता भर ज्योतिर्मय प्रपात पूर्वांचल ।''**

यहाँ 'प्रभात' ज्ञानोदय का प्रतीक है, 'अन्ध रात' अज्ञान एवं मोह-माया की । 'जागो' शब्द ज्ञान-जागृती का परिचय है । जागृति का यह समस्त चित्रण प्रतीकात्मक ही है । 'जड़ से चेतन का दुर्धर्ष समर' भी प्रतीकात्मक है और निम्न पंक्तियाँ -

**''दूर, दूरतर, दूरतम शेष,**
**कर रहा पार मन नभोदेश,**
**सजता सुवेश, फिर-फिर सुवेश जीवन पर,**
**छोड़ता रंग, फिर-फिर संवार,**

उड़ती तरंग ऊपर अपार,
**सन्ध्या ज्योति : ज्यों सुविस्तार अम्बर तर ।''**

तो संस्कृति की चितेरी प्रतीकात्मक है ही सही । इस प्रकार 'तुलसीदास' काव्य को यदि समग्रतः प्रतीकात्मक कह दिया जाय, तो भी कोई अतिशयोक्ति न होगी क्योंकि वहाँ तुलसीदास से संबंधित कथानक तो मात्र माध्यम है - यानि प्रतीक है । वास्तव में तो वहाँ चेतना के उन्नयन की कहानी ही कही गई है ।

## 28.3. शिल्प-विधान की दृष्टि से

अब तनिक शिल्प-विधान की दृष्टि से भी देख लेना चाहिए कि 'तुलसीदास' छायावादी परिप्रेक्ष्य में कहाँ तक सफल है । इस दृष्टि से मुख्यतः प्रतीकात्मकता, चित्रात्मक भाषा, लाक्षणिक पदावली, गेयता, अलंकार-विधान, ध्वन्यतात्मकता, व्यंग्य-वक्रता आदि बातों पर विचार किया जाता है । उन्हीं पर हम भी यहाँ अत्यन्त संक्षेप में विचार करेंगे ।

**प्रतीकात्मकता** के संबंध में हम ऊपर काफी कुछ कह आये हैं । यहाँ इतना मात्र पुनः कह देना चाहते हैं कि 'तुलसीदास' सूक्ष्मरूप से अपने समूचे परिवपेश में ही प्रतीकात्मकता है । जहाँ तक **चित्रात्मक भाषा** प्रयोग का प्रश्न है, निराला जी भाषा के सर्जक एवं रूप-विधायक दोनों हैं । उनकी भाषा एवं पद-योजना में चित्रात्मकता का गुण विशेष रूप में विद्यमान है । केवल दृश्य ही नहीं, भाव का चित्र प्रस्तुत कर देने में भी वे पूर्णतया सक्षम हैं । उदाहरण के लिए -

**''अस्तु रे, विवश, मारुत-प्रेरित**
**पवंत समीप आकर ज्यों स्थित,**
**घन-नीलालका दामिनी जित ललना वह ।''**

यहाँ 'पर्वत के समीप आई बदली' और तुलसीदास के समीप आई रत्नावली दोनों का एक सजीव-सा दुहरा चित्र हमारे सामने उभर आता है । और फिर जब वे कहते हैं -

**''उन्मुक्त गुच्छ चक्राँक पुच्छ,**
**लाख नर्तित कवि-शिखि-मन समुच्च,''**

तो भी 'मोर' और 'तुलसीदास' का दुहरा नर्तित चित्र उभर आता है । एक में स्थूल शरीरगत नर्तन है, तो दूसरे में सूक्ष्म भावगत । अतः भाषायी चित्रमयता का तत्व 'तुलसीदास' काव्य में अपने समूचे वैभव के साथ विद्यमान है ।

**लाक्षणिक पदावली** और प्रयोगों के दृष्टि से भी 'तुलसीदास' छायावादी परिवेश में संपूर्णतः उन्नत काव्य है । यदि हम यह कह दें कि प्रकृति-चित्रण एवं सांस्कृतिक सन्ध्या-वर्णन आदि समग्रतः लाक्षणिक प्रयोग एवं वर्णन हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं । उदाहरण के लिए -

**''रिपु के समक्ष जो था प्रचण्ड**
**आतप ज्यों तक पर करोद् दंड,**
**निश्चल अब वही बुन्देल खण्ड आभागत,**
**निःशेष सुरभि, कुरबक-समान**
**संलग्न वृन्त पर, चिन्त्य प्राण,**
**बीता उत्सव ज्यों, चिन्ह म्लान, छाया श्लथ ।''**

यहाँ लाक्षणिकता तो है ही सही व्यंग्य-वक्रता भी विद्यमान है । एक अन्य उदाहरण भी द्रष्टव्य है -

**झरते हैं शशधर से क्षण-क्षण**
**पृथ्वी के अधरों पर निःस्वन**
**ज्योतिमग्य प्राणों के चुम्बन, संजीवन ।**

यहाँ भी लाक्षणिकता एवं व्यंग्य-वक्रता का उद्घाटन हुए बिना वास्तविक अर्थ की उपलब्धि नहीं होती । इस प्रकार लाक्षणिकता एवं वक्रता के समन्वित रूप 'तुलसीदास' में अनेकशः एवं सर्वशः देखे जा सकते हैं ।

गेयता का तत्व भी यहाँ विद्यमान है । समूचे छन्द-विधान में एक स्वाभाविक स्वर-लय-प्रवाह विद्यमान है । स्वरों एवं नाद की ऊर्जस्विता भी देखी जा सकती है । अलंकारों की दृष्टि से

छायावादी काव्य की प्रवृत्तियों के अनुरूप ही 'तुलसीदास' में उपमा, रूपक आदि साम्य मूलक अलंकारों की योजना हुई है । यों विशेषण-विपर्यय या विरोधाभास आदि अलंकार भी युगीन प्रवृत्ति के अनुरूप ही विद्यमान हैं । ध्वन्यात्मकता भी सर्वत्र विद्यमान है ।

इस विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि छायावादी परिप्रेक्ष्य में 'तुलसीदास' एक पूर्णतः सफल काव्य है । छायावाद के समस्त आन्तरिक एवं बाह्य परिपार्श्वों का यहाँ समग्र-दर्शन होता है । कवि ने छायावादी चेतना के 'नियतिवाद' या 'भाग्यवादी' चेतना का भी 'विधि की इच्छा सर्वत्र अटल' जैसे शब्दों के प्रयोग द्वारा मान्य की है । वर्ण्य-विषय, भाव-विधान, कथा, संवेद्य एवं अभिव्यंजना-पद्धति आदि सभी दृष्टियों से 'तुलसीदास' छायावादी समग्र चेतना का ज्वलंत प्रतीक है । प्रसाद की 'कामायनी' के समान यह भी छायावादी 'आनन्दसाधना' को उच्चतम, उन्नमित स्वर मुखरित करता है । श्री धनंजय वर्मा के शब्दों में - "तुलसीदास छायावादी काव्यकला का चरम परिष्कार है । छायावादी काव्य की एक परिणति कामायनी है, दूसरी तुलसीदास ।"

## 28.4. युगीन-चेतना

किसी सर्जन के कथ्य का संबंध किसी भी युग से हो सकता है, पर उसमें अपने अस्तित्व वाले युग के परिप्रेक्ष्य एवं परिपार्श्व स्वतः ही समाहित हो जाया करते हैं । अपने मूल एवं स्थूल परिप्रेक्ष्य में 'तुलसीदास' के कथ्य का संबंध सूक्ष्म एवं मध्ययुगीन है । इसमें भावात्मकता, चिन्तना एवं दर्शन की ही इसमें प्रधानता भी है, फिर भी इसमें कवि के अनेक युगीन चेतनाओं का समाहार हो गया है । उनमें मुख्य हैं -

1. निम्न पीड़ित वर्ग के प्रति सहानुभूति ।
2. पारिवारिक परिवेश एवं समाज ।
3. राष्ट्रीयता के उननयन की चेतना ।
4. नारी-सम्बन्धी सामयिक दृष्टिकोण ।

## 24.4.1 निम्न पीड़ित वर्ग के प्रति सहानुभूति

सांस्कृतिक साँझ के चित्रण में यह भाव यो प्रत्यक्षतः हमारे सामने उभर कर आ जाता है । इन निम्न वर्गों की दशा अत्यधिक दलित, दीन-हीन, क्षीण, दयनीय एवं कारुणिक है । वह परंपरागत रूप में दलित एवं पराश्रित है । आधुनिक चेतना के अनुरूप ही कवि ने उनकी दयनीयता का कारण वर्ण एवं वर्ण-व्यवस्था को बताया है । पूँजीवादी व्यवस्था भी इस ह्रास का कारण है । तीन-चार पद्यों में निम्न वर्गीय पीड़ितों की दुर्दशा का वर्णन करने के बाद कवि ने पूँजीवाद पर भी व्यंग्यात्मक प्रहार किया है -

**''वह रंक यहाँ जो हुआ भूप, निश्चय रे,**
**चाहिए उसे और भी और**
**फिर साधारण को कहाँ ठौर ।**

इस तथ्य का प्रतिपादन निराला जी ने वर्तमान समाज व्यवस्था की प्रवृत्ति के रूप में किया हे, इसी कारण दलितों की दशा का सुधार नहीं हो पा रहा । वह सुधार क्या है, इसके बारे में कवि मौन है ।

## 28.4.2. पारिवारिक परिवेश एवं समाज

रत्नावली को विदा कराने जब उसका भाई कथा-क्षेत्र में प्रवेश करता है, तब कवि ने घर, परिवार एवं समाज स्थितियों का सांकेतिक वर्णन किया है । मायके न आने वाली कन्या के प्रति व्यंग्य का भाव यहाँ हे ही सही, पति के पीछे-पीछे चले आने पर भी सामाजिक व्यंग्य का भाव सजीवता से चित्रित हुआ है । माता, पिता, भाभियाँ, भाई, सहेलियाँ आदि सभी की एक झाँकी मिल जाती है । व्यंग्य का विक्षोभ भी है और हास्य-ममत्व की निर्मलता भी । उदाहरण के लिए -

**''हम, बिना तुम्हारे आए घर,**
**गाँव की दृष्टि से गए उतर ;**
**क्यों बहन, ब्याह हो जाने पर, घर पहला,**

**केवल कहने को है नैहर ?**
**दे सकता नहीं स्नेह उदार ? ''**

वास्तव में 'तुलसीदास' में वर्णित पारिवारिक जीवन में अपनत्व का भाव अधिक मुखर है, जबकि समाज में व्यंग्य एवं ताने का भाव प्रबल है और यह सही युग-स्थिति है ।

## 28.4.3. राष्ट्रीयता के उन्नयन की चेतना

छायावादी परिवेश में विरचित काव्य 'तुलसीदास' में कवि मे राष्ट्रीयता के उन्नयन की चेतना को बड़ी सूक्ष्मता से संजोया है । देश की क्षीण होती, दयनीय होती स्थितियों का चित्रण करने के बाद - 'देखो यह धूलि-धूसरित छवि' गा कर फिर कवि ने जैसे प्रकृति से कवि को राष्ट्रीयता का गान गाने का संदेश दिया है -

**''फिर असुरों से होती क्षण-क्षण**
**स्मृति की पृथ्वी यह दलित-चरण ;**
**वे सुप्त भाव गुप्ताभूषण अब हैं सय ;**
**इस जग के मग के मुक्त-प्राण,**
**गाओ-विहंग ! सद्ध्वनित गान ;**
**त्यागोज्जीवित, यह ऊर्ध्व ध्यान, धारा-स्तव ।**

कवि का विश्वास है कि राष्ट्रीयता के उन्मुक्त गान में ही स्वतंत्रता का प्रभाव आ सकेगा । यही प्रक्रिया तुलसीदास भी जागृति के रूप में अभिव्यक्त हुई हे । इस प्रकार स्पष्ट है कि 'तुलसीदास' में राष्ट्रीय और मानववादी विचारों का समन्वय है । राजनीतिक-सामाजिक पक्षों का भी समाहार है ।

## 28.4.4. नारी-संबंधी सामयिक दृष्टि

श्री धनंजय वर्मा के अनुसार - ''तुलसीदास का नारी-दृष्टिकोण अप्रत्यक्षतः नारी-स्वातंत्र्य-आंदोलन की अभिव्यक्ति माना जा सकता है । यह आदर्शवादी दृष्टिकोण का भी आग्रह है । तुलसीदास में नारी के साधारण मानवी रूप का अवसान होता है । वह एक प्रेरक और असाधारण देवी के रूप में प्रतिष्ठित है ।''

इस मत को जान लेने के बाद हम सामान्यतया यही कहना चाहते हैं कि नारी-संबंधी विचारों में यहाँ आदर्श एवं यथार्थ का समन्वय हुआ है । कवि नारी स्वातांत्र्य का पक्षपाती है, वह उसे भोग्या नहीं मानता । वह नारी को अंतश्चेतनाओं की उन्नायिका मानता है । वह अपने सत्य-सुन्दर रूप में प्रकृति के समान ही शाश्वत है मुक्तिदायिनी भावनाओं से संबंधित है ।

अंत में हम यही कहेंगे कि 'तुलसीदास' काव्य समन्तात छायावादी पुत्र की समस्त चेतनाओं, प्रवृत्तियों एवं विशेषताओं से संबंधित है । इसमें कवि ने उसी परिवेश में मानव की ओजस्विनी प्रवृत्तियों का गायन एवं उन्नयन किया है । इस दृष्टि से इसका महत्व और भी बढ़ जाता है ।

## 28.5. बोध प्रश्न

1. 'तुलसीदास' काव्य में छायावादी परिप्रेक्ष्य एवं युग चेतना पर एक लेख लिखिए ।



ಆದೇಶ ಸಂಖ್ಯೆ : ಕರಾಮುವಿ/ಅಸಾವಿ/4-060/2013-2014 ದಿನಾಂಕ : 24-09-2013
ಒಳಪುಟ : 60 GSM MPM ವೈಟ್ ಪ್ರಿಂಟಿಂಗ್ ಪೇಪರ್ ಮತ್ತು ಹೊರಪುಟ: 170 GSM ಆರ್ಟ್‌ಕಾರ್ಡ್
ಮುದ್ರಕರು : ಅಭಿಮಾನಿ ಪಬ್ಲಿಕೇಷನ್ ಲಿ., ಬೆಂಗಳೂರು-10 ಪ್ರತಿಗಳು : 1200

# Karnataka State Open University

Manasagangotri Mysore - 570 006

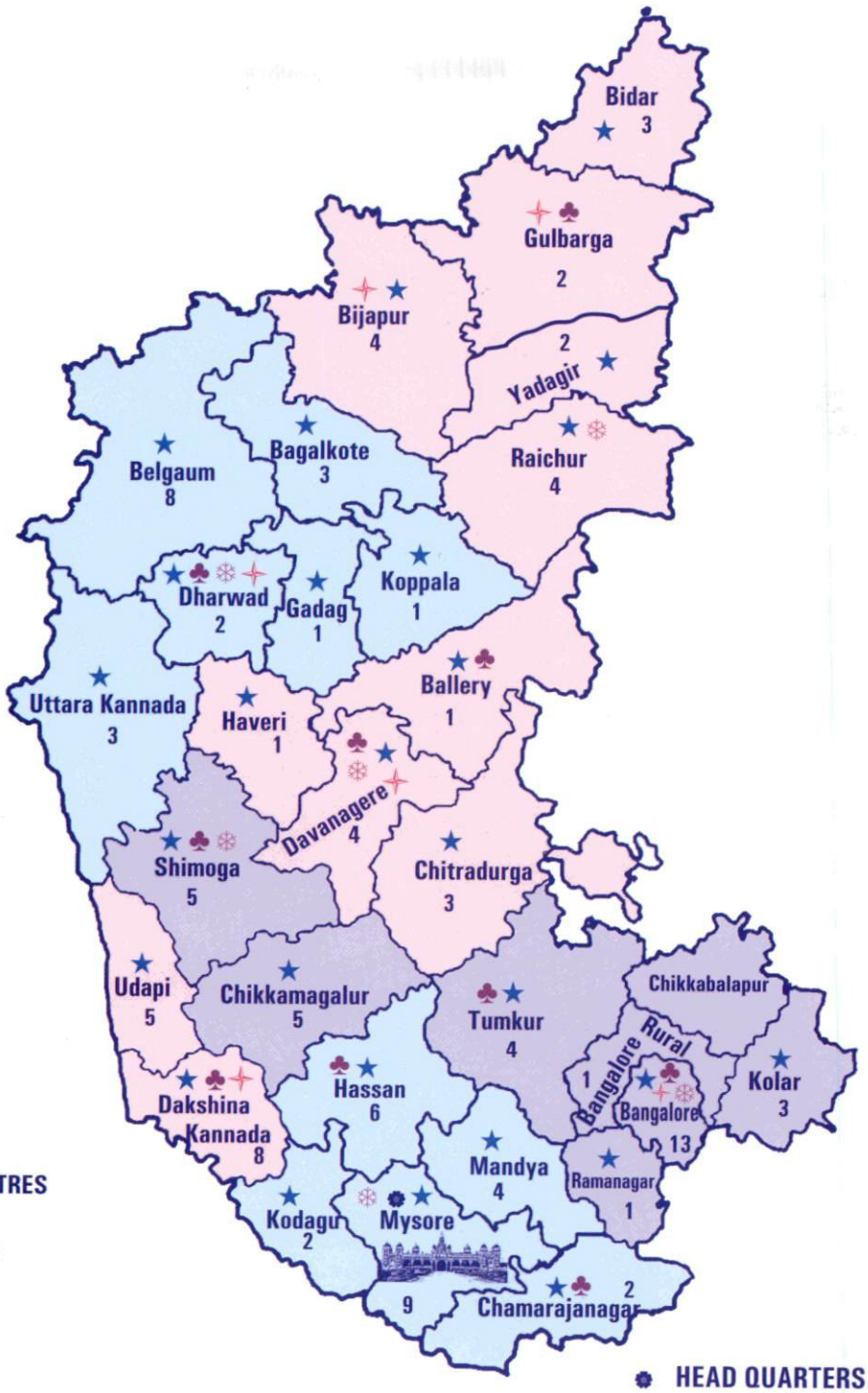


**REGIONAL CENTRES**

Bangalore
Davanagere
Gulbarga
Dharwad
Shimoga
Mangalore
Tumkur
Hassan
Chamarajanagar
Bellary

**HEAD QUARTERS**

**Total Study Centres : 111**

**Regional Centres : 10**

**B.Ed Study Centres : 10**

**M.Ed Study Centres : 08**

# Karnataka State Open University

Manasagangothri, Mysore - 570 006.

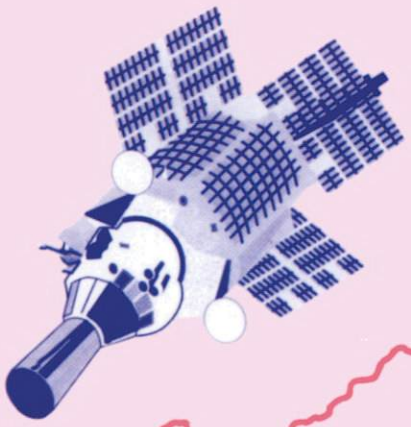

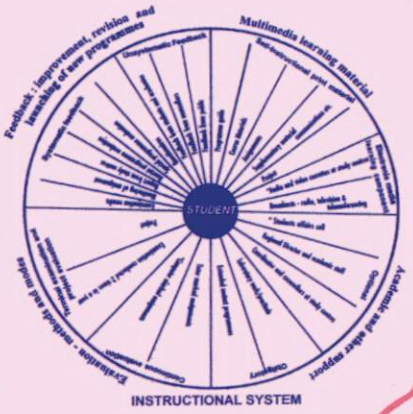


INSTRUCTIONAL SYSTEM

INSTRUCTIONAL SYSTEM